ई-पत्रिका
₹ 49/-

▶ डोनाल्ड ट्रम्प: बिस्मार्क बनेंगे या नेपोलियन?

▶ पुतिन का रूस: एक विरासत, एक भविष्य?

CULT CURRENT

वर्ष: 8 अंक: 5 मई, 2025

WE MAKE VIEWS

भारत पर हमला अब आगे क्या?

पहलगाम में हुए बर्बर आतंकी हमले ने भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा रणनीति को फिर से सक्रिय कर दिया है। पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवाद अभी भी भारतीय हितों को चुनौती देने के लिए तत्पर है, यह स्पष्ट है। अब प्रश्न यह है कि भारत इस बार किस प्रकार प्रत्युत्तर देगा? क्या यह प्रतिक्रिया कूटनीतिक दबाव तक सीमित रहेगी या इसमें निर्णायक सैन्य कार्रवाई शामिल होगी?

Let's
360°
Media Consultancy
Web solution
Advertising
Publication
Languages Services
Survey & Research
Branding
AV Production
Campaign management
Event organizer
PR partner, PR associate
Content writer & provider
Media analyst
URJAS MEDIA VENTUE IS PERHAPS THE ONLY CONSULTING FIRM THAT CAN GIVE YOUR ORGANISATION A 360 DEGREE MEDIA BUSINESS GROWTH CONSULTING THROUGH IT'S 360 CAPABILITIES. FOR US, CONSULTING DOES NOT ONLY MEAN MECHANICAL COST REDUCTION THROUGH BETTER IT APPLICATIONS, WE FIND OUT WHAT YOUR ORGANISATION REALY NEEDS AND GIVE YOU AN INTELLECTUAL SOLUTION THAT HELP YOU REDUCE COST AS WELL AS HELPS YOURS BUSINESS GROW AND BEAT THE COMPETITION.
NOW!!
OUR CONSULTANT WILL GET BACK TO YOU IN 24 HOURS AND PUT YOU IN TO THE HIGH GROWTH PATH
URJAS MEDIA
VENTURE
BEAT THE COMPETITION
www.urjasmedia.com
SMS 'BUSINESS GROWTH'
TO +91-8826-24-5305 OR
E-MAIL info@urjasmedia.com

गुमनाम नायिका

दादा के लिए पोती ने किया आविष्कार

शालिनी कुमारी

सिर्फ 12 साल की उम्र में जब बच्चे खिलौनों से खेलते हैं, तब पटना की शालिनी ने अपने दादा की तकलीफ से एक नई सोच को जन्म दिया। सीढ़ियों पर चढ़ते वक्त दादा का वॉकर बेबस हो जाता था, तो शालिनी ने तय किया—अब कुछ नया करना होगा। उसने बनाया Adjustable Walker, जिसमें Hydraulic Mechanism, Clutches, और Lever Locking System जैसी तकनीकें हैं, जिससे बुज़ुर्ग और दिव्यांग बिना परेशानी सीढ़ियाँ चढ़ सकें। शालिनी के इस आविष्कार ने राष्ट्रीय पुरस्कार जीता और National Innovation Foundation की मदद से इसका पेटेंट भी हुआ। आज यह Vissco कंपनी के ज़रिए बाज़ार में उपलब्ध है। शालिनी की कहानी बताती है—अगर इरादे मजबूत हों तो उम्र नहीं, सोच बड़ी होती है!

संपादकीय टोली

संपादकीय

राष्ट्रीय संपादक
संजय श्रीवास्तव

संपादक
श्रीराजेश

प्रबंध संपादक
सच्चिदानंद पाण्डेय

रोमिंग संपादक
डॉ. राजाराम त्रिपाठी

राजनीतिक संपादक
अंशुमान त्रिपाठी

मेट्रो संपादक
शक्ति प्रकाश श्रीवास्तव
डॉ. रुद्र नारायण

अंतर्राष्ट्रीय संपादक
श्रीश पाठक

कारपोरेट संपादक
गगन बत्रा

खेल संपादक
जलज श्रीवास्तव

डिजीटल संपादक
सुनीता त्रिपाठी

सहायक संपादक
संदीप कुमार

उप संपादक
मनोज कुमार
संतु दास

कला संपादक
जया वर्मा

वेब एवं आईटी विशेषज्ञ
अनुज कुमार सिंह

फोटो संपादक
विवेक पाण्डेय

विशेष संवाददाता
कमलेश झा
विकास गुप्ता

संवाददाता
संदीप सिंह
अनिरुद्ध यादव

ब्यूरो प्रमुख (अंतर्राष्ट्रीय)
अकुल बत्रा (अमेरिका)
सी.शिवरतन (नीदरलैंड)
जी. वर्मा(लंदन)
डॉ. मो. फहीम अकबर (पाकिस्तान)
ए. असगरजादेह (ईरान)
डॉ. निक सेरी (मलेशिया)

ब्यूरो प्रमुख (राष्ट्रीय)
आर. रंजन (नई दिल्ली)
संजय कुमार सिंह (लखनऊ)
कैप्टन सुधीर सिन्हा (रांची)
निमेष शुक्ल (पटना)
नागेन्द्र सिंह (कोलकाता)
राकेश रंजन (गुवाहाटी)

विपणन
सत्यजीत चौधरी
महाप्रबंधक

ऑनलाइन प्रसार
सृजीत डे

CULT CURRENT
WE MAKE VIEWS
DELENG19447
वर्षः 8 अंकः 5 मई, 2025

Follow us:
fb.com/cultcurrent @Cult_Current cultcurrent@gmail.com

Editorial/Business office

URJAS MEDIA VENTURE
Head office: Swastik Apartment, GF, Pirtala, Agarpara, Kolkata 700 109, INDIA, Tel: +91 6289-26-2363
Corporate Office: 14601, Belaire Blvd, Houston, Texas 77083 USA Tel: +1 (832) 670-9074
Web: http://cultcurrent.in

Cult Current is a monthly e-magazine published by Urjas Media Ventures from Swastik Apartment, GF, Pirtala, Agarpara, Kolkata 700 109.
Editor: Srirajesh

Disclaimer: All editorial and non-editorial positions in the e-magazine are honorary. The publisher and editorial board are not obligated to agree with all the views expressed in the articles featured in this e-magazine. Cult Current upholds a commitment to supporting all religions, human rights, nationalist ideology, democracy, and moral values.

COVER STORY 26

12 **भारत:** वैश्विक मेडिकल टूरिज्म का नया हब

16

46

डोनाल्ड ट्रम्प बिस्मार्क बनेंगे या नेपोलियन?

पुतिन का रूस

एक विरासत, एक भविष्य?

टैरिफ से मची उथल-पुथल, ट्रंप का ट्रेड वार पड़ा उल्टा 50

ट्रंप का टैरिफ दांव, क्या यह वैश्वि करण का अंत है? 54

अमेरिका-भारत अंतरिक्ष सहयोग का भविष्य 56

ट्रंप एवं तेहरान के बीच आखिर कौन सी पक रही है खिचड़ी 60

मजहब, राजनीति और संविधान ... 68

यूरोपीय संघ एवं मध्य एशिया: भविष्य... 72

64

भारत-अमेरिका

समान साझेदारी की ओर?

श्रेया घोषाल

पहलगाम आतंकी हमले के वि रोध में रद्द कि या कॉन्सर्ट **76**

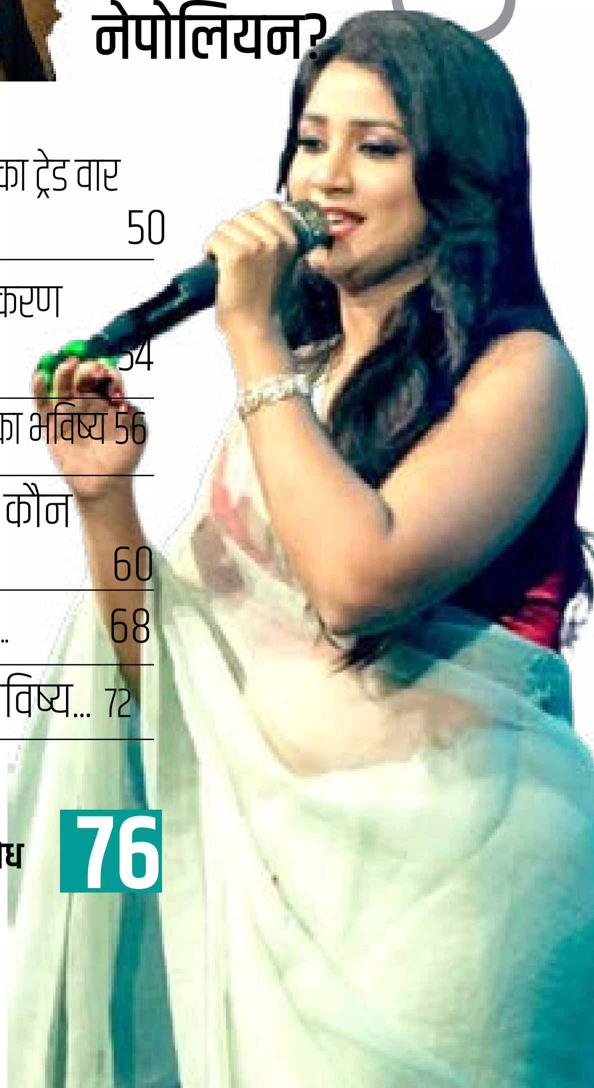

Small talk

न्यासा देवगन स्कूल से OUT! पढ़ाई में लगा ब्रेक?

बॉलीवुड के सुपरस्टार कपल अजय देवगन और काजोल की बेटी न्यासा देवगन अक्सर अपने ग्लैमरस अंदाज़ से लाइमलाइट में रहती हैं। लेकिन इस बार वो खबरों में अपने स्टाइल नहीं, बल्कि पढ़ाई को लेकर हैं। एक सोशल मीडिया पोस्ट में दावा किया गया है कि सिंगापुर के यूनाइटेड वर्ल्ड कॉलेज से न्यासा को एक साल पहले किसी कारण स्कूल से निकाला गया था! हालांकि, देवगन फैमिली ने इस पर चुप्पी साध रखी है, लेकिन Reddit पर वायरल हुई इस खबर ने गॉशिप गलियों में खलबली मचा दी है। अब फैंस पूछ रहे हैं—क्या ये महज़ अफवाह है या कोई बड़ा ट्विस्ट आने वाला है?

2025 में तहलका मचाने वाली खोजें

ध्वनि की शक्ति से डिप्रेशन पर वार!

टेक्सास यूनिवर्सिटी की एक नई खोज ने मानसिक रोगों के इलाज में क्रांति ला दी है। शोध में बताया गया कि हल्की ध्वनि तरंगों (अल्ट्रासाउंड) से मस्तिष्क के भावनात्मक केंद्र 'एमिगडाला' को बिना सर्जरी या दवा के सुरक्षित रूप से उत्तेजित किया गया। तीन हफ्तों तक चलने वाले इस नॉन-इनवेसिव इलाज से डिप्रेशन, चिंता और PTSD से जूझ रहे मरीजों को आश्चर्यजनक राहत मिली। 'मॉलिक्युलर साइकाइट्री' जर्नल में प्रकाशित यह अध्ययन भविष्य में मानसिक रोगों के इलाज की दिशा बदल सकता है। ●

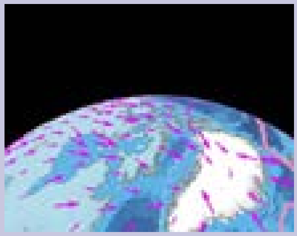

बर्फ पिघली, महाद्वीप भागे!

कोलोराडो यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों के अनुसार, 10,000 साल पहले जब हिम युग का अंत हुआ, तब बर्फीली चादरों के पिघलने से न केवल समुद्र का स्तर बढ़ा, बल्कि महाद्वीपीय प्लेटें भी तेज़ी से सरकने लगीं। अध्ययन से पता चला कि उत्तर अमेरिका की प्लेट की गति में 25% की बढ़ोतरी हुई, जबकि अटलांटिक महासागर की फैलाव दर में 40% तक इजाफा देखा गया। ●

सूरज की गड़गड़ाहट! आदित्य-L1 ने पकड़ी विशाल X6.3 सौर ज्वाला

फरवरी 2024 में सूर्य से निकली एक जबरदस्त X6.3 श्रेणी की सौर ज्वाला को भारत के सौर मिशन आदित्य-L1 ने रिकॉर्ड कर लिया। यह पहला मौका है जब सूर्य के निचले वायुमंडलीय स्तरों से ऐसी स्पष्ट तस्वीरें मिली हैं। सितंबर 2023 में लॉन्च हुआ आदित्य-L1, सूर्य और पृथ्वी के बीच L1 बिंदु पर स्थित है और सात वैज्ञानिक यंत्रों से लैस है। इस अवलोकन से वैज्ञानिक सौर ज्वालाओं की उत्पत्ति, विकास और पृथ्वी पर उनके असर को बेहतर समझ पाएंगे। ●

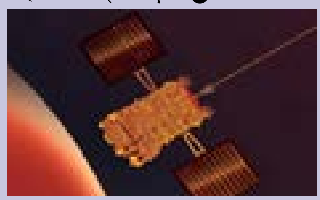

अब कोशिकाएँ छपेंगी! 3D बायोप्रिंटिंग से जीवन रचने की तैयारी

पिट्सबर्ग विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने CHIPS नामक 3D-प्रिंटेड कोलेजन स्कैफोल्ड विकसित किए हैं, जो शरीर के अंदरूनी ढांचे की नकल कर जीवित ऊतक उगाने में मदद करते हैं। यह तकनीक न केवल मधुमेह जैसी बीमारियों का अध्ययन करने में मदद करेगी, बल्कि भविष्य में जानवरों पर होने वाले परीक्षणों का विकल्प भी बन सकती है। ●

मुंबई में Tesla की रफ्तार, BKC में खोलेगा दमदार शोरूम

एलन मस्क की इलेक्ट्रिक कार कंपनी Tesla ने मुंबई के बांद्रा-कुर्ला कॉम्प्लेक्स (BKC) में अपना तीसरा भारतीय ऑफिस फाइनल कर लिया है। Phoenix Market City के को-वर्किंग स्पेस में 30 सीटों वाला यह ऑफिस 3 लाख रुपये मासिक किराये पर एक साल के लिए लीज़ पर लिया गया है। इसके साथ ही टेस्ला ने भारत में दो शोरूम के लिए भी जगह तय कर ली है — पहला BKC, मुंबई में और दूसरा दिल्ली के एरोसिटी में खुलने जा रहा है। ●

नियुक्ति

डॉ. पूनम गुप्ता
उप-गवर्नर, आरबीआई

डॉ. पूनम गुप्ता को 1 अप्रैल 2025 से भारतीय रिज़र्व बैंक का उप-गवर्नर नियुक्त किया गया है। वे यह पद संभालने वाली पहली महिला हैं। इससे पहले, वे नेशनल काउंसिल ऑफ़ एप्लाइड इकोनॉमिक रिसर्च की महानिदेशक और प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद की सदस्य रह चुकी हैं।

इस्तीफा

सुमंत कथपालिया
सीईओ व प्रबंध निदेशक, इंड्सइंड बैंक

सुमंत कथपालिया ने 29 अप्रैल 2025 को अपने पद से तत्काल प्रभाव से इस्तीफा दे दिया। उन्होंने 1,960 करोड़ रुपये के डेरिवेटिव्स से संबंधित लेखा त्रुटियों के लिए 'नैतिक जिम्मेदारी' लेते हुए यह कदम उठाया।

उन्होंने कहा

नरेंद्र मोदी
प्रधान मंत्री, भारत

"भारत आतंकवाद के खिलाफ किसी भी हद तक जाने के लिए तैयार है, जिन्होंने भी यह हमला किया है, उन आतंकियों और इस हमले की साजिश रचने वालों को उनकी कल्पना से भी बड़ी सजा मिलेगी।"

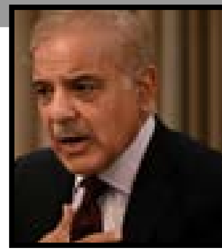

शहबाज शरीफ
प्रधान मंत्री, पाकिस्तान

"पहलगाम आतंकी हमले में 26 निर्दोष लोगों की जान गई है, इसके पीछे असल दोषियों तक पहुंचने के लिए पाकिस्तान एक 'न्यूट्रल, पारदर्शी और विश्वसनीय' जांच के लिए तैयार है।"

श्रद्धांजलि

राजीव गांधी, भारत के छठे प्रधानमंत्री थे। इनका जन्म 20 अगस्त 1944 को मुंबई में हुआ था। वे पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी और फिरोज गांधी के पुत्र तथा पंडित जवाहरलाल नेहरू के नाती थे। राजीव गांधी की प्रारंभिक शिक्षा देहरादून के वेल्हम और दून स्कूल में हुई।

उन्होंने लंदन के इम्पीरियल कॉलेज और कैम्ब्रिज के ट्रिनिटी कॉलेज में उच्च शिक्षा प्राप्त की। हालांकि वे राजनीति से दूर रहना चाहते थे, लेकिन 1968 में सोनिया गांधी से विवाह के बाद उन्होंने इंडियन एयरलाइंस में पायलट के रूप में कार्य किया। राजनीति में उनका प्रवेश 1980 में हुआ, जब उनके छोटे भाई संजय गांधी की एक विमान दुर्घटना में मृत्यु हो गई। इसके बाद, उन्होंने अमेठी से लोकसभा चुनाव जीतकर संसद में प्रवेश किया। 1981 में वे भारतीय युवा कांग्रेस के अध्यक्ष बने और 1982 में एशियाई खेलों के आयोजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 31 अक्टूबर 1984 को इंदिरा गांधी की हत्या के बाद, राजीव गांधी ने प्रधानमंत्री पद की शपथ ली। 40 वर्ष की आयु में वे भारत के सबसे युवा प्रधानमंत्री बने। उनके नेतृत्व में कांग्रेस पार्टी ने 1984 के आम चुनावों में 508 में से 401 सीटें जीतकर ऐतिहासिक सफलता प्राप्त की। राजीव गांधी ने भारत को 21वीं सदी में ले जाने के लिए कंप्यूटर और सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में क्रांति की शुरुआत की, जिससे उन्हें 'आधुनिक भारत के शिल्पकार' कहा जाता है। उनके कार्यकाल में बोफोर्स घोटाला और शाहबानो केस जैसे विवाद भी सामने आए।

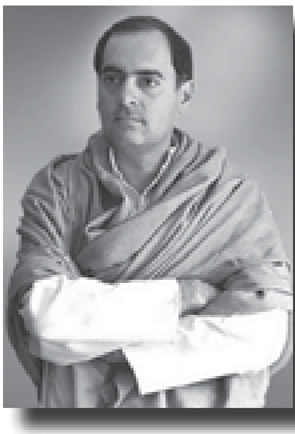

राजीव गांधी
(20/08/1944-21/05/1991)

1987 में उन्होंने श्रीलंका में शांति सेना भेजी, जिससे लिबरेशन टाइगर्स ऑफ तमिल ईलम (एलटीटीई) नाराज हो गया। 21 मई 1991 को तमिलनाडु के श्रीपेरंबदूर में एक चुनावी रैली के दौरान एलटीटीई द्वारा किए गए आत्मघाती हमले में उनकी मृत्यु हो गई। मरणोपरांत उन्हें भारत रत्न से सम्मानित किया गया। ●

कार्नी की वापसी और अमेरिका से दूरी, कनाडा ने चुना आत्मनिर्भरता का रास्ता

कनाडा में लिबरल पार्टी के मार्क कार्नी एक बार फिर प्रधानमंत्री बनेंगे। पार्टी ने आम चुनाव में 343 में से 169 सीटें जीतीं, जो बहुमत से सिर्फ 3 सीटें कम हैं। मुख्य प्रतिद्वंद्वी कंजर्वेटिव पार्टी 144 सीटों पर सिमट गई, और उसके नेता पियरे पॉलिवर खुद अपनी सीट हार गए। चुनाव जीतने के बाद कार्नी ने ऐलान किया कि अब अमेरिका के साथ कनाडा के पारंपरिक रिश्ते खत्म हो चुके हैं। उन्होंने कहा कि अमेरिका के विश्वासघात ने गहरी चोट पहुंचाई है और यह एक सबक है जिसे देश कभी नहीं भूलेगा। कार्नी ने आत्मनिर्भरता की नई दिशा की ओर इशारा करते हुए कहा, 'अब हम खुद के लिए सोचेंगे और बड़े सपने देखेंगे।' खालिस्तान समर्थक नेता जगमीत सिंह भी चुनाव हार गए और भावुक होकर कार्यकर्ताओं को संबोधित किया। ●

स्वीडन: तिहरे हत्याकांड का आरोपी किशोर गिरफ्तार

स्वीडन के उप्साला शहर में 29 अप्रैल को हुए तिहरे हत्याकांड के मामले में पुलिस ने एक किशोर को गिरफ्तार किया है। आरोपी पर सिटी सेंटर के एक हेयर सैलून में गोलीबारी कर स्कूटर से फरार होने का आरोप है। मृतकों की उम्र 15 से 20 वर्ष के बीच थी। पुलिस गिरोह से जुड़े होने की संभावना की जांच कर रही है। एक पीड़ित पहले से पुलिस निगरानी में था और कुख्यात गैंगस्टर इस्माइल अब्दो के रिश्तेदार पर हमले की योजना में संदिग्ध था। हत्याकांड की जांच जारी है। ●

बांग्लादेश हाई कोर्ट से मिली चिन्मय दास को जमानत

बांग्लादेश हाई कोर्ट ने पूर्व इस्कॉन प्रमुख चिन्मय दास को जमानत दी। उन्हें और उनके 18 साथियों को पिछले साल नवंबर में राजद्रोह के आरोप में गिरफ्तार किया गया था। आरोप था कि उन्होंने 25 अक्टूबर को चटगांव के लालदीघी मैदान में बांग्लादेश के राष्ट्रीय ध्वज के ऊपर भगवा ध्वज फहराया। इस फैसले के बाद विवाद उठ गया था, जिसमें तत्काल रिहाई की मांग की जा रही थी। चिन्मय दास में अल्पसंख्यक अधिकारों के लिए आवाज उठाते रहे हैं तथा उन्होंने अल्पसंख्यकों की रक्षा के लिए कानून की मांग की है। ●

ऑस्ट्रेलिया की AAA रेटिंग पर संकट नहीं: अल्बनीज

ऑस्ट्रेलियाई प्रधानमंत्री एंथनी अल्बनीज ने चुनावी खर्च को लेकर देश की AAA क्रेडिट रेटिंग पर खतरे की आशंका को खारिज किया है। उन्होंने कहा कि लेबर सरकार ने जिम्मेदार आर्थिक प्रबंधन किया है और 78 अरब डॉलर के घाटे को 2 अरब डॉलर के अधिशेष में बदला है। S&P ग्लोबल ने हाल ही में चेतावनी दी थी कि यदि खर्च पर नियंत्रण नहीं किया गया तो रेटिंग पर असर पड़ सकता है। लेकिन अल्बनीज ने कहा, ऑस्ट्रेलिया की वित्तीय स्थिति अब भी दुनिया की सर्वश्रेष्ठ अर्थव्यवस्थाओं में बनी हुई है। ●

सिंधु जल संधि को लेकर अब अंतरराष्ट्रीय अदालत जाएगा पाकिस्तान

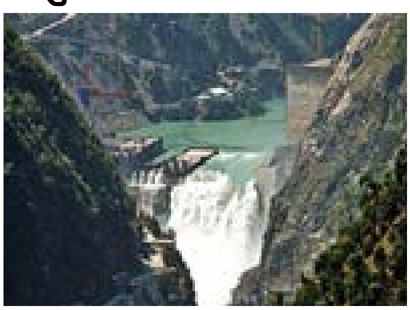

भारत द्वारा सिंधु जल संधि को एकतरफा निलंबित किए जाने के बाद पाकिस्तान अंतरराष्ट्रीय कानूनी कार्रवाई की तैयारी में है। कानून और न्याय राज्यमंत्री अकील मलिक ने बताया कि पाकिस्तान विश्व बैंक, हेग स्थित अंतरराष्ट्रीय न्यायालय और स्थायी मध्यस्थता न्यायालय में चुनौती देने पर विचार कर रहा है। यह कदम पहलगाम में हुए आतंकी हमले और भारत-पाक संबंधों में बढ़ते तनाव के बीच उठाया गया है। ●

पुतिन के युद्धविराम प्रस्ताव पर जर्मनी को शक

जर्मनी के रक्षा मंत्री बोरिस पिस्टोरियस ने रूस के राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन द्वारा 8 से 10 मई तक घोषित एकतरफा युद्धविराम पर गहरा संदेह जताया है। उन्होंने कहा कि क्रेमलिन पहले भी ऐसे खोखले वादे कर चुका है, जिनका पालन नहीं हुआ। ईस्टर युद्धविराम का उदाहरण देते हुए उन्होंने इसे भरोसेमंद नहीं बताया। पिस्टोरियस ने अमेरिका से यूक्रेन को समर्थन जारी रखने की अपील की और कहा कि यूरोप की सुरक्षा दांव पर है। उन्होंने हालिया अमेरिकी प्रस्ताव को यूक्रेन की 'आत्मसमर्पण संधि' की तरह बताया। ●

पहलगाम हमले के बाद हार्वर्ड विवि में 'पाकिस्तान सम्मेलन' को लेकर बवाल

हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के साउथ एशिया इंस्टीट्यूट द्वारा आयोजित 'पाकिस्तान सम्मेलन को लेकर विवाद खड़ा हो गया है। छात्रों ने इस आयोजन की आलोचना करते हुए कहा कि इससे राज्य प्रायोजित आतंकवाद को वैधता मिल सकती है, खासकर उस समय जब जम्मू-कश्मीर के पहलगाम में हाल ही में एक दर्दनाक आतंकी हमला हुआ, जिसे छात्रों ने धार्मिक आधार पर किया गया नरसंहार बताया। पाकिस्तान सम्मेलन को लेकर हावर्ड यूनिवर्सिटी की छात्रा सुरभि तोमर ने अपनी नाराजगी जताई। संवाददाताओं से बात करते हुए उन्होंने कहा कि पहलगाम में जो हुआ वह एक धर्म-आधारित लक्षित हत्या थी। ऐसे समय में जब हार्वर्ड ऐसे लोगों को बुलाता है, जिन्होंने वैचारिक रूप से ऐसे हमलों को जायज़ ठहराया है, तो यह खतरा होता है कि हमारे कैंपस में आतंक समर्थक विचारों को वैधता मिल जाए। ●

तुर्की में सिजेरियन डिलीवरी पर नई रोक

तुर्की सरकार ने हाल ही में एक नया स्वास्थ्य मंत्रालय का नियम लागू किया है, जिसके तहत अब मेडिकल सेंटर्स में ऐच्छिक सिजेरियन डिलीवरी पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। यह निर्णय उन संस्थानों पर लागू होता है जो केवल बाह्य रोगी सेवाएं प्रदान करते हैं और रातभर की देखभाल की सुविधा नहीं रखते। स्वास्थ्य विशेषज्ञों का मानना है कि सिजेरियन ऑपरेशन के लिए निरंतर निगरानी आवश्यक होती है, जो केवल अस्पतालों में संभव है। यह कदम देश में बढ़ती सिजेरियन डिलीवरी दरों को नियंत्रित करने करने के लिए उठाया गया है। ●

ज़ेलेंस्की ने रूस की विजय दिवस पर हमले की धमकी दे मचायी हलचल

रूसी विदेश मंत्रालय की प्रवक्ता मारिया ज़खारोवा ने आरोप लगाया है कि यूक्रेन के राष्ट्रपति वोलोदिमिर ज़ेलेंस्की ने 9 मई को मास्को के रेड स्क्वायर में होने वाली विजय दिवस परेड पर हमले की धमकी दी है। रूस ने इस अवसर पर तीन दिवसीय युद्धविराम की घोषणा की है, जबकि कीव ने 30 दिन की बिना शर्त शांति की मांग की है। ज़ेलेंस्की ने कहा कि रूस को 'राजनयिक दबाव' के लिए उसके 'दबाव बिंदुओं' पर हमला करना चाहिए। इस बीच, यूक्रेन के सांसद रोमन कोस्तेंको ने दावा किया कि रेड स्क्वायर पर हमले की योजना बनाना 'कठिन नहीं' है। ज़खारोवा ने इसे आतंकवादी मानसिकता का परिचायक बताया। विजय दिवस को लेकर दोनों देशों में तनाव चरम पर है। ●

सुप्रीम कोर्ट पर निशिकांत के बयानबाज़ी से बढ़ा विवाद

सुप्रीम कोर्ट ने 21 अप्रैल को साफ किया कि बीजेपी सांसद निशिकांत दुबे के खिलाफ अवमानना याचिका दाखिल करने के लिए याचिकाकर्ता को उसकी अनुमति की जरूरत नहीं है। कोर्ट ने याचिकाकर्ता से कहा कि वह याचिका दाखिल कर सकता है, पर इसके लिए अटॉर्नी जनरल की मंजूरी आवश्यक होगी। मामला तब उठा जब दुबे ने सुप्रीम कोर्ट और मुख्य न्यायाधीश पर टिप्पणी करते हुए कहा कि 'देश में धार्मिक युद्ध भड़काने के लिए सुप्रीम कोर्ट जिम्मेदार है' और अदालत अपनी सीमाओं का उल्लंघन कर रही है। यह विवाद तब भड़का जब सुप्रीम कोर्ट ने वक्फ (संशोधन) कानून की वैधता पर सवाल उठाए थे। इसके बाद राज्यसभा सांसद दिनेश शर्मा ने भी टिप्पणी की कि संविधान के तहत संसद सर्वोपरि है। इस घटनाक्रम ने न्यायपालिका और विधायिका के बीच खिंचती लकीर को एक बार फिर सुर्खियों में ला दिया है। ●

ट्रंप टैरिफ की मार

दम तोड़ता कश्मीरी कालीन उद्योग

कश्मीरी कालीन उद्योग सदियों पुरानी विरासत है, लेकिन अब अमेरिकी टैरिफ की मार से जूझ रहा है। मोहम्मद यूसुफ और उनकी पत्नी शमीमा जैसे बुनकर इस पारंपरिक कला को बचाने की जद्दोजहद में लगे हैं। अमेरिकी बाजार पर निर्भर यह उद्योग ट्रंप सरकार द्वारा लगाए गए टैरिफ के कारण मशीनी कालीनों से पिछड़ रहा है। वैश्विक प्रतिस्पर्धा और घटती मांग ने कारीगरों को हाशिए पर धकेल दिया है। कभी सैकड़ों बुनकरों वाला इलाका अब चंद हाथों में सिमट गया है, और विरासत संकट में है। ●

प्रदूषण की गिरफ्त में बर्नीहाट: सांसें भी हुईं मुश्किल

मेघालय का बर्नीहाट शहर, जो कभी अपनी हरियाली के लिए जाना जाता था, अब दुनिया का सबसे प्रदूषित शहर बन गया है। दो साल की सुमैया अंसारी की सांस की बीमारी इस संकट का प्रतीक बन गई है। IQAir की रिपोर्ट के अनुसार, यहां का पीएम 2.5 स्तर WHO मानकों से 25 गुना अधिक है। खनन, उद्योग और ईंधन दहन के चलते हवा में ज़हर घुल गया है। लोगों को सांस, त्वचा और आंखों की बीमारियां सताने लगी हैं, और जीवन अब हर दिन संघर्ष बन गया है। ●

शिक्षा नीति पर फिर भड़का भाषाई विवाद

नई शिक्षा नीति (एनईपी-2020) के तहत तीन-भाषा फार्मूले को लागू करने पर तमिलनाडु ने कड़ा विरोध जताया है। राज्य सरकार का आरोप है कि हिंदी थोपने की कोशिश हो रही है और केंद्र सरकार इसे शिक्षा फंडिंग से जोड़कर दबाव बना रही है। जबकि केंद्र का दावा है कि नीति लचीली है और इसका उद्देश्य शिक्षा में अवसर बढ़ाना है। यह पुराना विवाद अब फिर गरमा गया है और इससे एक बार फिर भाषा, शिक्षा और संघीय ढांचे को लेकर बहस तेज हो गई है। ●

हर आठ मिनट में एक मासूम लापता: बाल तस्करी की भयावह सच्चाई

भारत में बाल तस्करी एक गंभीर और बढ़ती हुई समस्या है। हर आठ मिनट में एक बच्चा लापता हो जाता है, जिनमें से कई यौन शोषण, बाल श्रम और हिंसा का शिकार होते हैं। 2023 में 20,000 बच्चे सड़कों पर थे, जिनमें आधे बेघर थे। उत्तर प्रदेश में यह संकट सबसे भयावह है, जहां चाइल्ड ट्रैफिकिंग के मामले तेजी से बढ़े हैं। सुप्रीम कोर्ट ने सभी राज्यों को इस पर सख्त रुख अपनाने को कहा है। ●

डीआरडीओ ने बनाई भविष्य की ड्रोन-मार तकनीक

डीआरडीओ ने आंध्र प्रदेश के कुरनूल में ट्रक-माउंटेड 30 किलोवाट लेज़र हथियार से उड़ते ड्रोन को सफलतापूर्वक मार गिराया है। इस अत्याधुनिक लेज़र बीम ने 3.5 किमी की ऊंचाई पर एक 'फिक्स्ड विंग ड्रोन' को चंद सेकंड में राख कर दिया। इस टेक्नोलॉजी को MK-2 नाम दिया गया है। अब भारत चीन, अमेरिका और रूस जैसे लेज़र हथियार विकसित कर चुके देशों की कतार में शामिल हो गया है। डीआरडीओ प्रमुख समीर वी. कामत के अनुसार यह केवल तो शुरुआत है। ●

दीघा में 'धार्मिक शक्ति' या 'राजनीतिक रणनीति'? ममता के मंदिर से उठते सवाल

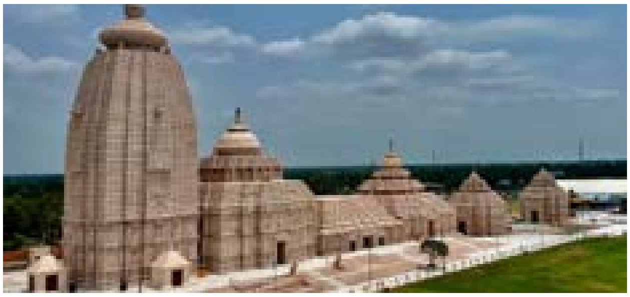

दीघा में 250 करोड़ रुपये की लागत से बना भव्य मंदिर 30 अप्रैल को ममता बनर्जी द्वारा उद्घाटित किया जाएगा। राजस्थान के लाल पत्थरों और वियतनामी मार्बल से बने इस कलिंग स्थापत्य शैली के मंदिर का शिखर 65 मीटर ऊंचा है, जिसमें तीन विशाल मंडप, धार्मिक कार्यक्रमों के लिए मंच, दमकल स्टेशन और पुलिस चौकी भी है। तृणमूल सरकार ने इसे स्थानीय मांग पर बना सांस्कृतिक केंद्र बताया है, लेकिन विपक्ष ने इसे हिंदुत्व की राजनीति और सरकारी पैसे की बर्बादी कहा है। शुभेंदु अधिकारी और बीजेपी ने इसे 'पुरी की नकल' बताते हुए इसकी धार्मिक वैधता पर सवाल खड़े किए हैं। कांग्रेस और वाम दलों ने भी आलोचना की है। विश्लेषकों का मानना है कि ममता बनर्जी यह मंदिर बीजेपी के उग्र हिंदुत्व के जवाब में 'मृदु हिंदुत्व' की रणनीति के तहत ला रही हैं। उधर, बीजेपी ने भी धार्मिक जवाबी कार्रवाइयों की तैयारी शुरू कर दी है। यह लड़ाई अब आस्था से आगे सियासत के केंद्र में है। ●

क्या मराठी अस्मिता के लिए साथ आएंगे राज और उद्धव?

शिवसेना के इतिहास में विभाजन कोई नई बात नहीं, लेकिन राज ठाकरे और उद्धव ठाकरे की संभावित एकजुटता महाराष्ट्र की राजनीति में बड़ा मोड़ ला सकती है। हाल ही में दोनों नेताओं ने 'मराठी अस्मिता' और 'महाराष्ट्र की भलाई' को प्राथमिकता देते हुए एकजुट होने के संकेत दिए हैं। राज ने मतभेदों को 'छोटा' बताया, वहीं उद्धव ने सशर्त समर्थन की बात की। क्या दोनों एक ही संगठन में लौटेंगे या केवल गठबंधन करेंगे? आगामी नगर निगम चुनाव इस नए समीकरण की दिशा तय कर सकते हैं। ●

नेपाल में राजशाही की वापसी की पुकार

नेपाल में एक बार फिर राजशाही और हिंदू राष्ट्र की मांग जोर पकड़ रही है। काठमांडू की सड़कों पर पूर्व राजा ज्ञानेंद्र शाह के समर्थन में प्रदर्शन हो रहे हैं, जिनमें राजशाही समर्थक देश की अव्यवस्था, भ्रष्टाचार और राजनीतिक अस्थिरता के खिलाफ आवाज़ उठा रहे हैं। 2006 में जहाँ लोग लोकतंत्र के पक्ष में खड़े थे, वहीं अब वही जनता राजशाही की वापसी चाहती है। भारत के लिए यह आंदोलन कई मायनों में अहम है—भू-राजनीतिक संतुलन, नेपाल-चीन संबंध और हिंदू राष्ट्रवाद की क्षेत्रीय गूंज। अगर नेपाल फिर से राजशाही और हिंदू राष्ट्र बनता है, तो यह भारत में हिंदुत्व की बहस को और धार दे सकता है। साथ ही, भारत-नेपाल संबंधों और पड़ोसी रणनीति में नया मोड़ ला सकता है। ●

श्रीराजेश, संपादक

पाकिस्तान मुल्क नहीं, मानसिकता है

कई युद्धों में भारत से हारने के बाद पाकिस्तान ने 'आतंकवाद' को अपनी रणनीति बना लिया है।

भारत के विभाजन की त्रासदी ने न केवल दो देशों की सीमाएं खींचीं, बल्कि दो भिन्न मानसिकताओं को जन्म दिया। पाकिस्तान को अक्सर एक राष्ट्र के रूप में देखा जाता है, परंतु यह केवल एक भौगोलिक इकाई नहीं, बल्कि एक विशेष प्रकार की मानसिकता है – एक ऐसी सोच, जो आक्रोश, असुरक्षा और श्रेष्ठतावादी धार्मिक अलगाव से जन्मी है। हमें पाकिस्तान को एक देश की बजाय एक मानसिक स्थिति, एक विचारधारा के रूप में देखने का प्रयास करना चाहिए, जिसकी जड़ें इतिहास में हैं, और जिसकी शाखाएं आज भी आतंकवाद, हिंसा और सांस्कृतिक विभाजन के रूप में फैल रही हैं।

पाकिस्तान का निर्माण किसी सकारात्मक वैचारिक धरातल पर नहीं हुआ था। यह 'इस्लाम खतरे में है' जैसे धार्मिक नारों पर टिका एक भावनात्मक अभियान था, जिसे जिन्ना जैसे नेता ने उस समय के राजनीतिक परिदृश्य में अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए भुनाया। जिन्ना स्वयं इस्लाम के कोई गहन जानकार नहीं थे, पर उन्होंने धार्मिक अस्मिता को एक हथियार बना लिया। यह विचार कि मुसलमान और हिंदू एक साथ नहीं रह सकते, यह न केवल विभाजन का आधार बना, बल्कि यह भविष्य के लिए भी नफरत और टकराव की नींव रख गया।

शाह वलीउल्लाह जैसे धार्मिक चिंतकों द्वारा प्रतिपादित यह 'दूरी की राजनीति' आगे चलकर मुस्लिम लीग और जिन्ना जैसे नेताओं के हाथों में एक आत्म-घातक औजार बन गई। पाकिस्तान के निर्माण की नींव 'नकारात्मकता' थी – कि हम हिंदुओं जैसे नहीं हैं, कि हम अलग हैं, और इसी आधार पर हमें अलग देश चाहिए।

पाकिस्तान के पहले दिन से ही उसके अंदर एक आत्मविरोधाभासी उग्रवाद पनपने लगा। इस्लाम के नाम पर बने इस देश में इस्लाम की असल शिक्षाओं की जगह नफरत और हिंसा ने ले ली। भारत के खिलाफ 1947 में छेड़ा गया युद्ध हो, या 1971 में बंगालियों के नरसंहार की विभीषिका – पाकिस्तान की सैन्य और राजनीतिक सोच का मूल आधार भारत-विरोध और इस्लाम की गलत व्याख्या ही रहा है।

1971 में जब बांग्लादेश ने पाकिस्तान से अलग होकर अपनी अस्मिता कायम की, तब द्वि-राष्ट्र सिद्धांत की नींव ही हिल गई। बंगाली मुसलमानों ने यह साबित कर दिया कि पाकिस्तान का निर्माण इस्लाम की रक्षा नहीं, बल्कि सांप्रदायिक और भाषायी उत्पीड़न के खिलाफ किया गया एक राजनीतिक छल था। जनरल असीम मुनीर जैसे सैन्य शासकों द्वारा आज भी 'द्वि-राष्ट्र सिद्धांत' की रट लगाना न केवल ऐतिहासिक सच्चाई से आंखें चुराना है, बल्कि एक दिवालिया राष्ट्र की हताशा भी है।

कई युद्धों में भारत से हारने के बाद पाकिस्तान ने 'आतंकवाद' को अपनी रणनीति बना लिया। एक राष्ट्र ने अपने संसाधन, अपने युवाओं और अपनी विदेश नीति को इस कदर कट्टरता में झोंक दिया कि आतंकवाद वहां 'आर्थिक उद्योग' बन गया। कश्मीर, जिसका राजनीतिक भविष्य 1947 में अभी तय नहीं हुआ था, वहां पाकिस्तान ने बलपूर्वक घुसपैठ कर, उसकी शांति को सात दशकों से निगल रहा है।

जनरल मुनीर का हालिया बयान कि 'हम कश्मीर नहीं भूलेंगे' एक बार फिर आतंक को वैचारिक वैधता देने की कोशिश है। यह एक सच्चाई है कि आज

भारतीय जम्मू-कश्मीर विकास, रोजगार और पर्यटन में नए कीर्तिमान बना रहा है, जबकि पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में गरीबी, दमन और असंतोष की आग सुलग रही है। इसका उत्तर पाकिस्तानी हुक्मरानों के पास नहीं, केवल युद्ध और आतंक के खोखले नारे हैं।

विडंबना यह है कि जिस इस्लाम के नाम पर पाकिस्तान बना, उसी इस्लाम के मूल सिद्धांत पाकिस्तान की राजनीति से पूरी तरह नदारद हैं। कुरान में अल्लाह को 'रब्ब-उल-आलमीन' कहा गया है – अर्थात समस्त सृष्टि का पालनहार। फिर पाकिस्तान का संकीर्ण, हिंसक राष्ट्रवाद किस इस्लाम से प्रेरित है? यदि इस्लाम खतरे में है, जैसा बार-बार कहा जाता है, तो यह इस्लाम की सच्चाई पर ही प्रश्नचिह्न लगाता है।

पाकिस्तान, इस्लाम के वैश्विक दृष्टिकोण को नकार कर एक कट्टर, संकुचित विचारधारा का वाहक बन गया है। अफगानिस्तान, ईरान, बांग्लादेश, इंडोनेशिया – सभी मुस्लिम बहुल राष्ट्र हैं, लेकिन पाकिस्तान जैसा आत्मविरोधी और हिंसक राष्ट्र कोई नहीं। यहां तक कि चीन में मुसलमानों पर हो रहे अत्याचार भी पाकिस्तान को विचलित नहीं करते, क्योंकि पाकिस्तान का इस्लाम केवल भारत के खिलाफ 'राजनीतिक इस्लाम' है – मानवता से विहीन, और स्वार्थ से प्रेरित।

पाकिस्तान एक राज्य के रूप में नहीं, एक असफल प्रयोग के रूप में इतिहास में दर्ज हो रहा है। यह एक झूठ पर खड़ा हुआ विचार है – कि मजहब मुल्क बना सकता है। जब इस विचार की नींव ही कमजोर हो, तो इमारत कितनी ही बार पुनर्निर्मित हो, वह ढहती ही है।

आज जब भारत विकास की नई ऊंचाइयां छू रहा है, पाकिस्तान अपने ही अतीत के बंजर मैदान में उलझा हुआ है – न नेता में दृष्टि है, न सेना में विवेक। अगर पाकिस्तान को वाकई बचना है, तो उसे 'भारत-विरोध' से बाहर निकल कर 'आत्म-सुधार' की राह अपनानी होगी – एक ऐसी राह जो विचारों में स्वतंत्रता, समाज में समावेश और राजनीति में जिम्मेदारी की मांग करती है।

क्या पाकिस्तान इस मानसिकता से बाहर निकल पाएगा? या वह इतिहास में केवल एक चेतावनी बनकर रह जाएगा – कि मजहब के नाम पर बने मुल्क, जब आत्मनिरिक्षण छोड़ दें, तो वे अपने ही लोगों के लिए नर्क बन जाते हैं।

Ajesh

srirajesh.journalist @srirajesh editor@cultcurrent.com

भारत: वैश्विक मेडिकल टूरिज्म का नया हब

जलज श्रीवास्तव

भारत, जो कभी केवल योग और आयुर्वेद के लिए जाना जाता था, आज विश्वभर के गंभीर रोगियों के लिए आधुनिक तृतीयक चिकित्सा सुविधाओं का एक प्रमुख केंद्र बन चुका है। 2024 में भारत सरकार ने चिकित्सा उद्देश्यों से आने वाले मरीजों को 4.6 लाख से अधिक मेडिकल वीज़ा जारी किए। यह आंकड़ा न केवल भारत की स्वास्थ्य सेवा प्रणाली की साख को दर्शाता है, बल्कि यह भी दिखाता है कि भारत वैश्विक स्वास्थ्य परिदृश्य में कितनी तेजी से उभर रहा है। भारत के प्रमुख मेडिकल टूरिज्म स्रोत हैं—जैसे कि इराक, सूडान, अफगानिस्तान और बांग्लादेश। मैक्स हेल्थकेयर के मुख्य बिक्री और विपणन अधिकारी, अनास अब्दुल वाजिद के अनुसार, '2021 से भारत ने अफगानी मरीजों को कम वीज़ा दिए हैं क्योंकि भारत अफगानिस्तान के वर्तमान शासन को मान्यता नहीं देता।' इसी प्रकार, बांग्लादेश में चल रही राजनीतिक अस्थिरता भी भारत आने वाले मरीजों की संख्या को प्रभावित कर रही है।

मेडिकल टूरिज्म सिर्फ अस्पतालों तक सीमित नहीं है—यह होटल, रेस्तरां, अनुवाद सेवाएं, ट्रैवल एजेंसियों और फार्मेसियों का एक समृद्ध पारिस्थितिकी तंत्र बनाता है। उदाहरण के लिए, गुरुग्राम के सेक्टर 50 में एक बेकरी संचालक अरबी, पश्तो और रूसी में गिनती कर सकता है

गुरुग्राम विदेशी मरीजों के लिए एक पसंदीदा स्थान बनता जा रहा है। यहां के होटल, रेस्तरां, फार्मेसी और टैक्सी सेवाएं खासतौर पर अंतरराष्ट्रीय मरीजों की जरूरतों के अनुसार ढल रही हैं।

और उसके पीछे का रेस्तरां अरबी शैली के व्यंजन परोसता है। वहीं पास ही मरीजों और उनके परिवारों के लिए होटल और लॉजिंग सुविधाएं हैं।

बात जब जीवन की हो, तो रोगी केवल इलाज नहीं, भरोसा और सुरक्षा चाहते हैं। यही वजह है कि फिलीपींस की कैसेंड्रा और उनके पति ने अपने बेटे जुल्करनैन अली की लिवर ट्रांसप्लांट सर्जरी के लिए अमेरिका या जापान के बजाय भारत को चुना। 'फिलीपींस में जीवित रहने की संभावना कम थी और अन्य विकल्प बेहद महंगे थे,' उन्होंने बताया। भारत में इलाज के दौरान उन्होंने उबर से यात्रा की, होटल में स्वयं खाना बनाया, और मैक्स सुपर स्पेशलिटी अस्पताल में सफल सर्जरी करवाई।

एनओटीटीओ (राष्ट्रीय अंग और ऊतक प्रत्यारोपण संगठन) के अनुसार, 2023 में भारत में 18,378 अंग प्रत्यारोपण हुए, जिनमें से 1,851 विदेशी नागरिक थे। दिल्ली-एनसीआर में ही 1,445 ट्रांसप्लांट हुए। इन मामलों में ज्यादातर ट्रांसप्लांट जीवित डोनरों द्वारा हुए, जो अक्सर मरीज के रिश्तेदार होते हैं।

नई दिल्ली के बाद गुरुग्राम विदेशी मरीजों के लिए एक पसंदीदा स्थान बनता जा रहा है। यहां के होटल, रेस्तरां, फार्मेसी और टैक्सी सेवाएं खासतौर पर अंतरराष्ट्रीय मरीजों की जरूरतों के अनुसार ढल रही हैं। इराक से आए अबू इस्माइल अपने कैंसरग्रस्त भाई के साथ फोर्टिस

भारत न सिर्फ मेडिकल वैल्यू ट्रैवल के लिहाज़ से किफायती है, बल्कि ई-वीज़ा जैसी आसान प्रक्रियाएं भी इसे आकर्षक बनाती हैं। उदाहरण के तौर पर, स्तन कैंसर का इलाज निजी अस्पतालों में ' 3.25 लाख (लगभग $3,800) से शुरू होता है, जो औसत भारतीय अस्पताल का खर्च का दस गुना है।

अस्पताल में इलाज करा रहे हैं और एक अपार्टमेंट होटल में रह रहे हैं जहाँ स्टाफ अनुवाद ऐप्स की मदद से संवाद करते हैं।

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया, भारत मेडिकल टूरिज्म इंडेक्स 2020-21 के अनुसार चिकित्सा यात्राओं के लिए विश्व का दसवाँ सबसे आकर्षक गंतव्य रहा। लेकिन इस गंतव्य की लोकप्रियता अलग-अलग देशों के साथ भारत के संबंधों और वहाँ के राजनीतिक हालात पर भी निर्भर करती है।

2024 में बांग्लादेशी नागरिकों को भारत आने के लिए दिए गए मेडिकल वीज़ा की संख्या 3.2 लाख से अधिक रही, जो कुल वीज़ा का लगभग 70% है। लेकिन विशेषज्ञ अब्दुल वाजिद के अनुसार, भारत-बांग्लादेश संबंधों में हालिया तनाव के बाद इस संख्या में गिरावट आ सकती है। यही स्थिति अफगानिस्तान के साथ 2021 में देखी गई थी। तालिबान के सत्ता में आने और भारत द्वारा काबुल स्थित दूतावास बंद कर नई दिल्ली स्थानांतरित करने के बाद, 2021 में जहाँ 22,463 अफगान नागरिक भारत इलाज के लिए आए थे, वहीं 2024 तक यह संख्या घटकर केवल एक रह गई।

नेपाल को इस सूची में शामिल नहीं किया गया है क्योंकि नेपाली नागरिक बिना वीज़ा भारत में इलाज करा सकते हैं। इसके बावजूद भारत का आकर्षण बना हुआ है, यहाँ तक कि विकसित देशों के नागरिक भी इलाज के लिए भारत आते हैं। 2024 में अमेरिका से 1,911 और यूके से 785 लोग भारत इलाज के लिए आए।

विशेषज्ञों के अनुसार, भारत न सिर्फ मेडिकल वैल्यू ट्रैवल के लिहाज़ से किफायती है, बल्कि ई-वीज़ा जैसी आसान प्रक्रियाएं भी इसे आकर्षक बनाती हैं। उदाहरण के तौर पर, स्तन कैंसर का इलाज निजी अस्पतालों में 3.25 लाख (लगभग $3,800) से शुरू होता है, जो औसत भारतीय अस्पताल का खर्च का दस गुना है। फिर भी, यह उन मरीजों के लिए किफायती विकल्प है जिनके देशों में यह सुविधा नहीं है। पश्चिम एशिया के देश, जैसे ओमान और यूएई, अपने नागरिकों का इलाज प्रायः सरकार की ओर से कराते हैं, और भारत में कम खर्च होने के कारण वह उनका पसंदीदा गंतव्य बनता है। अब्दुल वाजिद बताते हैं कि कुछ मरीज बीमा या गैर-लाभकारी संस्थाओं के माध्यम से इलाज कराते हैं, जबकि कई अपनी जेब से खर्च उठाते हैं।

नीति आयोग की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत का

भारत सरकार ने मेडिकल टूरिज्म को 'चैंपियन सर्विस सेक्टर' के रूप में मान्यता दी है

मेडिकल टूरिज्म क्षेत्र मध्य-2020 के दशक तक 5–6 बिलियन डॉलर तक पहुँचने की संभावना थी, और 2022 तक इसके 13 बिलियन डॉलर तक पहुँचने की उम्मीद जताई गई थी।

तुर्कमेनिस्तान के नागरिक नियाज़ोव, जिन्होंने अपनी बेटी के इलाज के लिए निजी खर्च वहन किया, ई-वीज़ा प्रक्रिया से प्रभावित हुए। वे बताते हैं कि भारतीय नागरिक तुर्कमेनिस्तान में प्रवेश के लिए $35 से $1015 (' 2,983–' 86,525) तक शुल्क चुकाते हैं। अब्दुल वाजिद बताते हैं कि भारत यह आसानी इसलिए देता है क्योंकि अन्य देशों में भी भारतीयों को अपेक्षाकृत आसानी से वीज़ा मिलता है।

भारत सरकार ने मेडिकल टूरिज्म को 'चैंपियन सर्विस सेक्टर' के रूप में मान्यता दी है और 2018 में इस क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए 5,000 करोड़ का कोष भी निर्धारित किया गया था। मरीजों और उनके सहयोगियों के लिए ई-वीज़ा की सुविधा भारत आने की प्रक्रिया को सरल बनाती है। लेकिन विशेषज्ञों की राय है कि इस क्षेत्र को अभी और पारदर्शिता और नियमन की आवश्यकता है।

अब्दुल वाजिद बताते हैं, 'अगर कोई व्यक्ति किसी हेल्थकेयर फैसिलिटेटर से संपर्क करता है, तो उसके पास यह जानने का कोई ज़रिया नहीं होता कि उसे किसी प्रतिष्ठित अस्पताल ले जाया जाएगा या किसी संदिग्ध नर्सिंग होम में।' उन्होंने बताया कि वे ऐसे कई मामलों के संपर्क में आए हैं जहाँ मरीज इलाज कराए बिना ही भारत में फँस गए और उन्हें दूसरी जगह स्थानांतरित करना पड़ा।

हमने इस संबंध में विदेश मंत्रालय, स्वास्थ्य मंत्रालय और दिल्ली सरकार से संपर्क किया है कि विदेशी नागरिकों के लिए भारत में उपलब्ध शिकायत निवारण तंत्र क्या है, उन्हें किस प्रकार की धोखाधड़ी का सामना करना पड़ता है, और बांग्लादेश-अफगानिस्तान जैसे देशों में राजनीतिक घटनाओं का मेडिकल वीज़ा प्रवाह पर क्या प्रभाव पड़ा है। हालांकि लेख लिखे जाने तक जवाब नहीं मिला है, जवाब मिलने पर यह जानकारी सार्वजनिक की जाएगी।

लेकिन जहां सही चिकित्सक और उचित सुविधा मिलती है, वहाँ भारत में इलाज किसी वरदान से कम नहीं। नियाज़ोव कहते हैं, 'मेरी बेटी का इलाज करने वाले दोनों डॉक्टर अत्यंत सहायक थे। हमें आशा है कि वह स्वस्थ जीवन जिएगी।'

इस लेख में प्रस्तुत आंकड़े और तथ्यों का स्रोत इंडियास्पेंड पर प्रकाशित नुशैबा इक़बाल की रिपोर्ट 'How India Is Turning Into A Popular Medical Tourism Hub' **है, जिनका साभार सहित उपयोग किया गया है।**

पुतिन का रूस

एक विरासत, एक भविष्य?

अलेक्जेंडर गबुएव

फरवरी 2022 में यूक्रेन पर पुतिन का आक्रमण इतिहास का एक निर्णायक मोड़ साबित हुआ। जहाँ इसने यूक्रेन को भीषण पीड़ा दी, वहीं रूस को भी गहराई से बदल दिया। अब, क्या अमेरिका के सहानुभूति रखने वाले राष्ट्रपति द्वारा मध्यस्थता कराया गया युद्धविराम भी पुतिन द्वारा स्थापित पश्चिम से टकराव के सिद्धांत को पलट पाएगा? क्या कीव में शांति स्थापित होने के बाद भी चीन के साथ रूस के गहरे संबंधों को बदला जा सकता है? एक पड़ताल जो रूस के भविष्य के साथ पश्चिम के लिए मौजूद चुनौतियों पर विचार करती है।

फरवरी 2022 में रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन का यूक्रेन पर आक्रमण इतिहास के एक निर्णायक मोड़ के रूप में दर्ज हो गया। बेशक, सबसे सीधा असर तो आक्रमण झेल रहे यूक्रेन पर हुआ, लेकिन इस युद्ध ने रूस को भी उतना बदल दिया जितना शायद बाहर के लोग समझ पाए हों। अब तो, अमेरिका के किसी ऐसे राष्ट्रपति की मध्यस्थता से भी, जो अपने रूसी समकक्ष से सहानुभूति रखते हों, कोई युद्धविराम उस हद तक बदलाव नहीं ला सकता जहाँ तक पुतिन ने पश्चिम के साथ टकराव को ही रूसी जीवन का मूलमंत्र बना दिया है। इसी तरह, यूक्रेन में लड़ाई थम भी जाए तो, चीन के साथ रूस के रिश्तों को पुतिन ने जितनी गहराई दी है, उसे भी पलटा नहीं जा सकता।

परिणामस्वरूप, पुतिन के रूस में दमन और बढ़ गया है, और रूसी समाज में पश्चिमी विरोधी

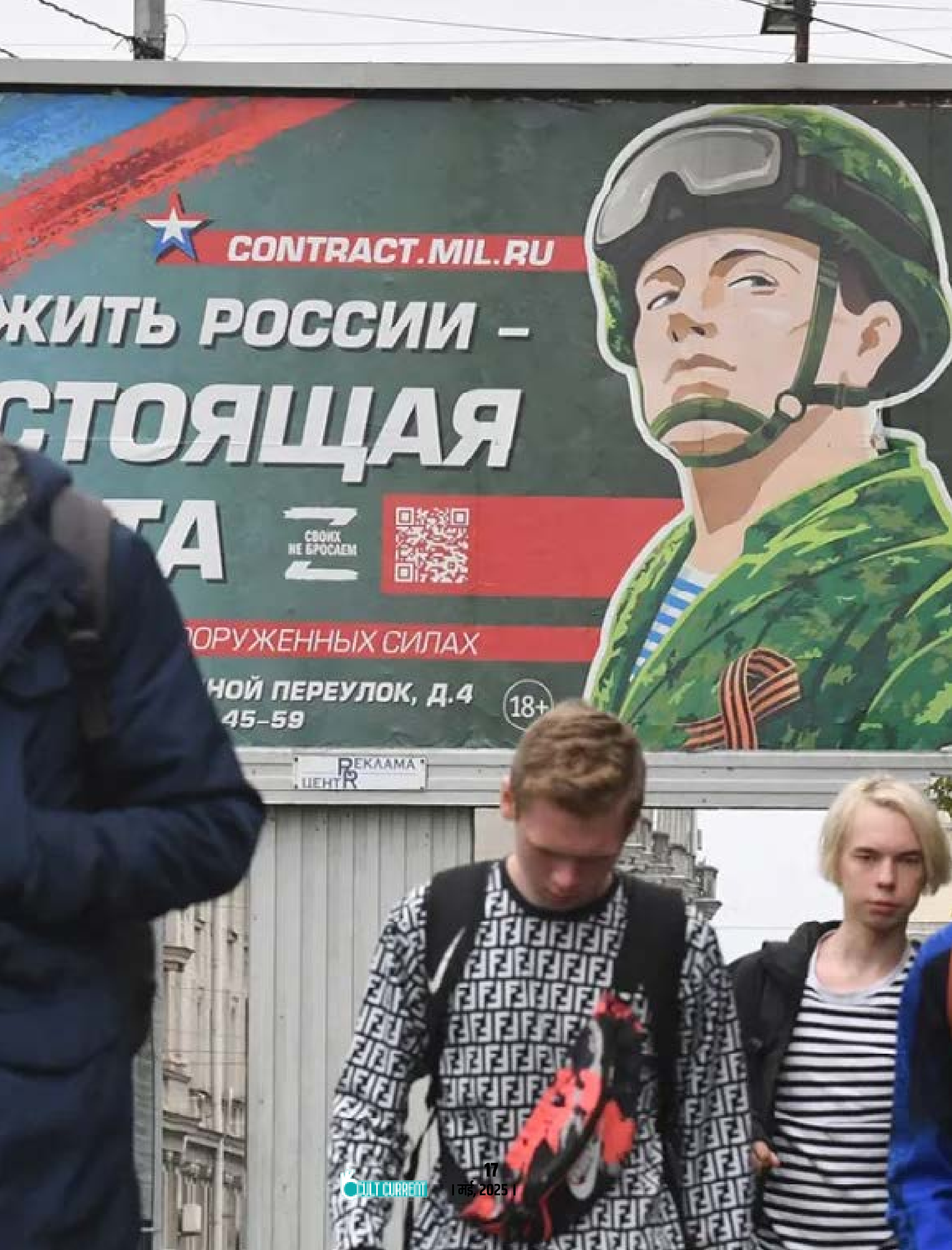
CONTRACT.MIL.RU
ЖИТЬ РОССИИ –
СТОЯЩАЯ
ТА
СВОИХ НЕ БРОСАЕМ
ОРУЖЕННЫХ СИЛАХ
НОЙ ПЕРЕУЛОК, Д.4
45–59
18+
РЕКЛАМА ЦЕНТР

भावना पहले से कहीं ज्यादा फैल गई है। 2022 से ही क्रेमलिन ने राजनीतिक विरोध को दबाने, युद्ध समर्थक और पश्चिमी विरोधी प्रचार को बढ़ावा देने और ऐसे रूसी नागरिकों का एक बड़ा वर्ग तैयार करने के लिए व्यापक अभियान चलाया है, जिन्हें इस युद्ध से सीधा लाभ मिल रहा है। अब, शीर्ष अधिकारियों और देश के कई सबसे धनी लोगों समेत, लाखों रूसी पश्चिम को अपना सबसे बड़ा दुश्मन मानते हैं।

हालाँकि, पिछले तीन सालों में अमेरिका और यूरोप के अधिकारियों ने पुतिन के आक्रमण का ज़ोरदार विरोध किया, लेकिन कई बार अनजाने में वे पुतिन के इस नैरेटिव को भी हवा देते रहे कि पश्चिम रूस से नाराज़ है और उनका टकराव अस्तित्व की लड़ाई है। पश्चिमी नेताओं की रणनीति में एक सुसंगत और दीर्घकालिक दृष्टिकोण का अभाव था, और उनकी बयानबाजी से यह भी लगने लगा कि उनका मकसद कहीं ज्यादा बड़ा है। मिसाल के तौर पर, 2024 में एस्टोनिया की तत्कालीन प्रधानमंत्री और अब यूरोपीय संघ की शीर्ष राजनयिक काजा कलास ने कहा था कि पश्चिमी नेताओं को इस बात की चिंता नहीं करनी चाहिए कि यूक्रेन की जीत के लिए नाटो की प्रतिबद्धता रूस को तोड़ सकती

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने युद्ध को जल्दी खत्म करने की कोशिश करके ट्रांसअटलांटिक गठबंधन में दरार डाल दी है। लेकिन भले ही ट्रम्प के पुतिन के साथ दोस्ताना रवैये से अमेरिका और रूस के रिश्तों में थोड़ी नरमी आ जाए, लेकिन पश्चिम को लेकर पुतिन का अविश्वास इतना गहरा है कि सुलह नामुमकिन है।

है। क्रेमलिन के प्रचार तंत्र ने इस बात को फौरन फैला दिया कि पश्चिम का असली मकसद तो रूस को तोड़ना है।

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने युद्ध को जल्दी खत्म करने की कोशिश करके ट्रांसअटलांटिक गठबंधन में दरार डाल दी है। लेकिन भले ही ट्रम्प के पुतिन के साथ दोस्ताना रवैये से अमेरिका और रूस के रिश्तों में थोड़ी नरमी आ जाए, लेकिन पश्चिम को लेकर पुतिन का अविश्वास इतना गहरा है कि सुलह नामुमकिन है। वे यह भी नहीं जानते कि ट्रम्प यूरोप को रूस के साथ संबंध फिर से जोड़ने के लिए मना पाएँगे, और उन्हें पता है कि 2028 में अमेरिका का नया प्रशासन अपनी नीतियाँ बदल सकता है। बहुत कम अमेरिकी कंपनियाँ हैं जो रूस में दोबारा कारोबार करने के लिए उत्सुक हैं। और पुतिन, चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग के साथ अपने रणनीतिक रिश्तों को छोड़ने वाले नहीं हैं। क्रेमलिन, डिजिटल नियंत्रण के उपकरणों समेत, चीनी तकनीक का इस्तेमाल करता रहेगा, चीन के बाज़ारों और वित्तीय व्यवस्था पर निर्भर रहेगा, और बीजिंग के साथ अपने सुरक्षा संबंधों को और मजबूत करेगा, भले ही इससे वाशिंगटन के साथ टकराव का खतरा बढ़ जाए।

ट्रम्प की तुष्टिकरण की नीति से यूरोप के कई नेता रूस के प्रति और भी सख़्त रवैया अपना सकते हैं, लेकिन ऐसा करना सही नहीं होगा। पुतिन का शासन अंदर से तो गिरने वाला नहीं है। इसलिए पश्चिमी देशों और खासकर यूरोप को, कम से कम फिलहाल तो, रूस को रोकने की नीति पर टिके रहना होगा।

लेकिन एक दिन पुतिन सत्ता से बाहर हो जाएँगे। मुमकिन है कि रूस के अगले नेता भी उन्हीं के करीबी हों, लेकिन उनके पास देश को नई दिशा देने की ज्यादा आज़ादी होगी और हालात को सुधारने के ठोस कारण भी होंगे। भले ही रूसी जनता में कोई बेचैनी न हो, पुतिन का रूस अंदर से कमज़ोर है। पुतिन के उत्तराधिकारियों के लिए देश की स्थिति बेहतर करने का सबसे सीधा तरीका यही होगा कि वे विदेश नीति में संतुलन बनाएँ। इसलिए यूरोप के नेता जहाँ रूस को रोकने की कोशिशें तेज़ कर रहे हैं, वहीं उन्हें पुतिन के जाने के बाद मिलने वाले मौके का फ़ायदा उठाने के लिए भी तैयार रहना चाहिए।

उन्हें रूस के साथ एक नए रिश्ते की कल्पना करनी होगी, जो इस भ्रम से दूर हो कि पश्चिम का मज़बूत आर्थिक और रणनीतिक साझेदार बनने के लिए रूस को भी द्वितीय विश्व युद्ध के बाद पश्चिम जर्मनी की तरह पूरी तरह से बदलना होगा। उन्हें शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के लिए कुछ शर्तें रखनी होंगी, जैसे कि हथियारों को नियंत्रित करने की रणनीति और आर्थिक निर्भरता के ऐसे तरीके, जिनसे दोनों में से कोई भी पक्ष हथियारों का इस्तेमाल न कर सके। और यूरोपीय नेताओं (और उन अमेरिकी नेताओं को भी जो ट्रम्प की तरह पुतिन के समर्थक नहीं हैं) को रूस से जुड़े अपने हर संदेश को ज्यादा स्पष्ट करके यह बताना शुरू कर देना चाहिए कि वे इस रिश्ते को कैसा देखना चाहते हैं – मिसाल के तौर पर, अपने सैन्य बजट बढ़ाने की घोषणाओं में भी।

हालांकि, क्रेमलिन में हर कोई पुतिन की तरह पश्चिम का विरोधी नहीं है। कई रूसी अभिजात वर्ग तो अंदर ही अंदर मानते हैं कि यूक्रेन पर युद्ध सिर्फ़ एक नैतिक अपराध नहीं था, बल्कि एक रणनीतिक भूल भी थी। ऐसे समझदार लोगों के लिए अगर पश्चिमी देशों से बेहतर संबंध की उम्मीद बंधी रहे, तो पुतिन के बाद जब सत्ता के लिए खींचतान मचेगी, तो उनके जीतने की संभावना भी बढ़ जाएगी। इसलिए ज़रूरी है कि पश्चिम रूस को अपने संदेश में बदलाव लाए। ये बदलाव न सिर्फ़ भविष्य के लिए अच्छी तैयारी होगी, बल्कि आज के लिए भी बेहतर रणनीति साबित होगी। अगर पश्चिमी नेता क्रेमलिन के इस नैरेटिव को बढ़ावा देना बंद कर दें कि वो रूस के साथ कभी न खत्म होने वाली लड़ाई चाहते हैं, तो दक्षिणपंथी और वामपंथी की बातों में भी लोग कम आएंगे, जो ये

दावा करते हैं कि रक्षा उद्योग तो बस हमेशा युद्ध कराना चाहता है।

लेकिन अगर पश्चिमी नेता यही कहते रहे कि रूस के साथ फ़ायदेमंद रिश्तों पर बात करना भी बेकार है, तो वो क्रेमलिन के आने वाले नेताओं को एक ख़तरनाक रास्ते पर धकेल रहे हैं। ऐसे में उनके पास पुतिन के तौर-तरीकों को अपनाने के अलावा कोई चारा नहीं बचेगा, जिसमें चीन पर निर्भरता भी शामिल है। शायद कुछ पश्चिमी लोगों को लगता हो कि पिछले तीन सालों ने उन्हें सिखा दिया है कि रूस को वो अपनी मर्ज़ी से नहीं चला सकते। लेकिन उनके पास अब भी कुछ ऐसे हथियार हैं जिनका उन्होंने पूरी तरह से इस्तेमाल नहीं किया है, और उन्हें नहीं छोड़ना चाहिए।

पुतिन ने जब क्रेमलिन में अपना पहला और दूसरा कार्यकाल (2000-2008) संभाला था, तो रूस की जीडीपी लगभग दोगुनी हो गई थी। इसकी वजह कमोडिटीज़ के बढ़ते दाम, पश्चिमी देशों का निवेश, बाज़ार में सुधार और नए उद्योगों का फलना-फूलना था। रूस का ज़ारशाही और कम्युनिस्ट दौर, और सोवियत संघ के गिरने के बाद का अराजक दशक, इन सबसे तुलना करें तो रूस तब इतना अमीर और आज़ाद कभी नहीं था। 2010 के दशक में आर्थिक विकास धीमा ज़रूर हो गया, लेकिन सामाजिक समझौता काफ़ी हद तक बना रहा।

लेकिन यूक्रेन पर युद्ध के दौरान, रूस की अर्थव्यवस्था और उस सामाजिक समझौते में काफ़ी बदलाव आ गए हैं। जनवरी 2024 में फॉरेन अफेयर्स में, अर्थशास्त्री एलेक्जेंड्रा प्रोकोपेनको ने बताया कि क्रेमलिन के सामने एक 'असंभव पहेली' थी। क्रेमलिन को एक महंगे युद्ध को चलाना था, लोगों का जीवन स्तर बनाए रखना था, और रूस की अर्थव्यवस्था को भी सुरक्षित रखना था – ये तीनों काम एक साथ नहीं हो सकते थे।

लेकिन पुतिन ने इस पहेली को सुलझा लिया। उन्होंने युद्ध में पैसा लगाने का फ़ैसला कियाः 2025 से 2027 के बीच, रूसी सरकार अपने बजट का लगभग 40% रक्षा और सुरक्षा पर खर्च करने की योजना बना रही है, जिससे स्वास्थ्य और शिक्षा जैसी ज़रूरी चीज़ों के लिए कम पैसे बचेंगे। कई रूसियों के लिए ये युद्ध आर्थिक रूप से फ़ायदेमंद रहा है। 2022 में थोड़ी गिरावट के बाद, 2023 में रूस की जीडीपी 3.6% और 2024 में 4.1% बढ़ी, क्योंकि रक्षा पर काफ़ी पैसा ख़र्च किया गया था। लेकिन युद्ध से होने वाले नुक़सान, जैसे महंगाई बढ़ना, 2024 के आखिर में ही दिखने शुरू हुए थे। यूक्रेन में लड़ाई बंद होने के बाद भी, रूस की अर्थव्यवस्था का बड़ा हिस्सा सेना पर ही निर्भर रहेगा। रक्षा उद्योग को सेना के भारी नुक़सान की भरपाई करनी होगी, और पुतिन ने सेना को आधुनिक बनाने की एक महंगी योजना शुरू की है।

अगर यूक्रेन में युद्ध दोबारा शुरू होता है या चलता रहता है, तो रूस के लोगों की आर्थिक हालत और भी ख़राब हो सकती है। लेकिन इससे सरकार पर कोई ख़ास दबाव नहीं पड़ेगा। जैसे-जैसे रूसी अर्थव्यवस्था पर दबाव बढ़ा है, मॉस्को ने लोगों को दबाना और सख़्त कर दिया है। क्रेमलिन ने युद्ध और सेना की आलोचना को अपराध बना दिया है, और बड़े-बड़े और गुमनाम विरोधियों के

ख़िलाफ़ भी हाई-प्रोफ़ाइल केस शुरू कर दिए हैं। सरकार ने 'विदेशी एजेंट' माने जाने वाले लोगों की गिनती भी बहुत बढ़ा दी है और 'अवांछनीय' संगठनों पर हमले तेज़ कर दिए हैं, जिससे युद्ध की आलोचना करने वालों के सामने बस दो ही रास्ते बचे हैंः या तो देश छोड़कर चले जाओ, या जेल जाओ। पुलिस और सुरक्षा बलों को ऐसे केस में फ़ायदा होता है, क्योंकि जितने ज्यादा दुश्मन वो पकड़ते हैं, उतने ज्यादा पैसे उन्हें मिलते हैं।

पुतिन ने एक तरफ़ तो युद्ध की आलोचना करना मुश्किल बना दिया, और दूसरी तरफ़ इसे पैसे कमाने का ज़रिया भी बना दिया।

इससे सबसे ज्यादा फ़ायदा तो पुतिन के दोस्तों और उनके साथियों को हुआ है। उनमें से कुछ लोगों ने विदेश की कंपनियों के रूस छोड़ने का फ़ायदा उठाया और उनकी सस्ती होती संपत्तियाँ ख़रीद लीं, या बस उन्हें ज़ब्त कर लिया। ऐसा उन्होंने रमज़ान कादिरोव जैसे ताक़तवर लोगों की मदद से किया। लेकिन अमीर लोगों के अलावा, हज़ारों और ऐसे लोग हैं जिन्हें युद्ध से फ़ायदा हुआ है, जैसे वो व्यापारी जो पाबंदियों को तोड़कर पैसा कमा रहे हैं। इसके

अलावा, हज़ारों व्हाइट-कॉलर प्रोफ़ेशनल्स, ख़ासकर आईटी, फ़ाइनेंस और बिज़नेस सर्विस में, ज्यादा सैलरी पा रहे हैं, क्योंकि जो लोग सरकार के ख़िलाफ़ हैं वो देश छोड़कर जा रहे हैं और उनकी जगहें खाली हो रही हैं।

इसके अलावा, पुतिन ने उन लोगों को भी पैसे देकर अपना समर्थक बना लिया है जिन्हें युद्ध में भेजा गया है, जो सैन्य कारखानों में काम करते हैं, और उनके परिवार वालों को भी। क्रेमलिन के मुताबिक़, जून 2024 में लगभग 700,000 रूसी सैनिक जंग के मैदान में थे। एक रूसी सैनिक की औसत सैलरी अब लगभग 2,000 डॉलर हर महीने है, जो राष्ट्रीय औसत से दोगुनी और उन इलाक़ों के औसत से चार गुनी है जहाँ से ज्यादातर सैनिक भर्ती किए गए हैं। हमले की शुरुआत से अब तक 800,000 से ज्यादा रूसी सैनिक या तो मारे गए हैं या घायल हुए हैं; सरकार ने हर हताहत के परिवार को 80,000 डॉलर तक दिए हैं। क्रेमलिन ने इतना पैसा ख़र्च करके ऐसे लोगों का एक बड़ा समूह बना दिया है जो अपनी तरक्की और अपने करियर के लिए एक ग़लत युद्ध के ऋणी हैं। 2024 में, क्रेमलिन ने एक योजना शुरू की है जिसके तहत सैनिकों को सरकारी नौकरियों में भर्ती किया जाएगा।

युद्ध के कारण रूसी समाज में भी कई बदलाव आए हैं। जहाँ एक तरफ़ सार्वजनिक क्षेत्र के कर्मचारियों के लिए तरक्की के रास्ते खुल गए हैं, वहीं दूसरी तरफ़ सरकारी विभागों में भी अब पश्चिमी विचारधारा के ख़िलाफ़ बोलने वालों को ज्यादा महत्व दिया जा रहा है। सरकारी नौकरी करने वाले लोग अब यूक्रेन में कब्ज़ा किए गए इलाक़ों में काम करके आसानी से प्रमोशन पा रहे हैं। जासूसी और सुरक्षा एजेंसियों में काम करने वाले हज़ारों रूसी अफ़सर पश्चिमी और यूक्रेनी एजेंटों को पकड़कर और युद्ध-विरोधी कार्यकर्ताओं और पत्रकारों को चुप कराकर अपने करियर में आगे बढ़ रहे हैं। इन सब बातों ने रूसी ब्यूरोक्रेसी को और भी ज्यादा राजनीतिक बना दिया है। यहाँ तक कि सेंट्रल बैंक जैसे संस्थानों में भी, जहाँ पहले पश्चिमी सोच वाले लोग हुआ करते थे, अब पश्चिमी पाबंदियों से लड़ने वाले योद्धा बन रहे हैं।

यूक्रेन में युद्ध शुरू होने से बहुत पहले ही, और पुतिन की सख़्ती के कारण, रूसी समाज में एक ठहराव आ गया था और लोग डर के साए में जीने लगे थे। लेकिन पिछले कुछ सालों में, क्रेमलिन ने लोगों के दिमाग़ में पश्चिमी देशों के प्रति नफ़रत भरने के लिए काफ़ी प्रयास किए हैं। सितंबर 2022 में, सरकार ने सभी स्कूलों में हर हफ़्ते देशभक्ति के नाम पर ऐसे सेशन शुरू कराए, जिनमें युद्ध का समर्थन करने वाली बातें सिखाई जाती हैं। सरकार ने मनोरंजन और संस्कृति के क्षेत्र में भी ज्यादा दख़ल देना शुरू कर दिया है। जो कलाकार, संगीतकार और लेखक सरकार की बात नहीं मानते थे, उन्हें देश छोड़ने पर मजबूर कर दिया गया। सरकार ने असंतुष्ट लेखकों को 'चरमपंथी' घोषित कर दिया और युद्ध का विरोध करने वाले बुद्धिजीवियों पर झूठे मुक़दमे चलाए। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी से प्रेरणा लेते हुए, क्रेमलिन ने इंटरनेट पर भी पहरा बढ़ा दिया है। इंस्टाग्राम और फ़ेसबुक को गैरकानूनी घोषित कर दिया गया है और यूट्यूब पर भी पाबंदी लगा दी गई है, जिसे पहले 12 साल से ज्यादा उम्र के लगभग आधे रूसी हर दिन इस्तेमाल करते थे।

ज़रूर, कोई अप्रत्याशित घटना 'फ़ोर्ट्रेस रूस' को हिला सकती है। हाल ही में सीरिया में बशर अल-असद की सरकार का अचानक गिरना दिखाता है कि सबसे क्रूर सरकारें भी अंदर से उतनी मज़बूत नहीं होतीं जितनी दिखती हैं। लेकिन पुतिन की सरकार का पूरी तरह से गिर जाना अभी मुमकिन नहीं है। अगर संभावित विरोधियों को ख़रीदने के लिए पैसे कम पड़ने लगें, तो सरकार और ज्यादा सख़्ती कर सकती है।

यूक्रेन में युद्ध ने रूस की विदेश नीति को सिर्फ़ थोड़ा-सा नहीं बदला है, बल्कि हमेशा के लिए बदल दिया है। अब रूसी विदेश नीति का मक़सद तीन चीज़ें हैं: युद्ध में मदद करने के लिए सहयोगी बनाना, पाबंदियों से जूझ रही अर्थव्यवस्था को बचाना, और यूक्रेन का समर्थन करने वाले पश्चिमी देशों से बदला लेना। रूसी सरकार ने उन देशों और संगठनों के साथ रिश्ते मज़बूत करने में काफ़ी पैसा लगाया है जो पश्चिमी देशों के लिए मुश्किलें खड़ी कर सकते हैं, जैसे कि उत्तरी कोरिया, ईरान और यमन के हौथी विद्रोहियों जैसे ईरानी सहयोगी।

अगर युद्ध ख़त्म हो जाता है और अमेरिका पाबंदियाँ हटा लेता है, तो क्रेमलिन शायद कुछ समय के लिए अमेरिका के ख़िलाफ़ अपनी हरकतों को रोक दे, जैसे हौथी विद्रोहियों जैसे अमेरिकी दुश्मनों को हथियार देना। लेकिन जैसे ही ट्रम्प की टीम सत्ता से बाहर होगी, वो फिर से ये सब शुरू कर सकता है। क्रेमलिन ने दुनिया भर के विकासशील देशों से अपने रिश्ते बनाए रखने और बेहतर करने के लिए भी काम किया है। रूस अब भारत, दक्षिण पूर्व एशिया, अफ़्रीका, मध्य पूर्व और लैटिन अमेरिका को सस्ते दामों पर सामान बेच रहा है।

सबसे ज़रूरी बात ये है कि रूस ने अब पूरी तरह से चीन की तरफ़ रुख़ कर लिया है। युद्ध से पहले, दोनों देशों के बीच एक ऐसा रिश्ता था जिसमें चीन ज्यादा ताक़तवर था, लेकिन रूस यूरोप के साथ भी व्यापार, पैसे और तकनीक के रिश्ते बनाए रखकर अपने विकल्प खुले रखता था। लेकिन 2022 से, पुतिन ने युद्ध में चीन की मदद के बदले में उस पर ज्यादा निर्भर रहना स्वीकार कर लिया है। क्रेमलिन तीन साल तक युद्ध सिर्फ़ इसलिए चला पाया क्योंकि चीन से हथियारों के ज़रूरी हिस्से मिल रहे थे। रूस की

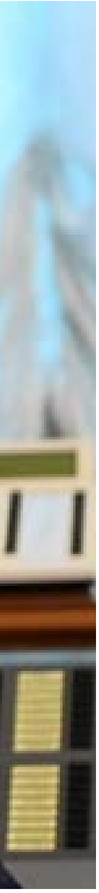

अमेरिका और यूरोप को रूस के 'शैडो वॉर' का भी सामना करना पड़ेगा। मॉस्को ने लोकतंत्र की नींव को कमज़ोर करने के लिए कई तरीके खोज निकाले हैं, जिनमें तोड़फोड़ करना, हत्याएं करवाना, झूठी खबरें फैलाना और चुनावों में हस्तक्षेप करना शामिल है।

अर्थव्यवस्था भी इसलिए चल रही है क्योंकि चीन अब रूस से 30% सामान ख़रीदता है, जो 2021 में सिर्फ़ 14% था, और उसे 40% सामान देता है, जो युद्ध से पहले 24% था। चीन मास्को को युआन में व्यापार करने की सुविधा भी देता है।

रूस ने ये उम्मीद लगाकर ये दाँव खेला है कि इससे उसे फ़ायदा होगा। क्रेमलिन का मानना है कि चीन को मज़बूत करना एक अच्छा निवेश है, क्योंकि चीन वाशिंगटन का सबसे बड़ा विरोधी है और इससे अमेरिकी दबदबा कम होगा। यही वजह है कि रूस अब चीन को हथियारों के वो डिज़ाइन भी दे रहा है जो वो 2022 से पहले नहीं देना चाहता था। रूस अब अपने संस्थानों और विश्वविद्यालयों को चीन के साथ मिलकर साइंस, गणित, आईटी और स्पेस जैसे क्षेत्रों में काम करने के लिए प्रोत्साहित कर रहा है। चीनी कंपनी हुआवेई में काम करने वाले रूसियों की गिनती भी बहुत बढ़ गई है। रूस चीन को ज़मीन के रास्ते से सस्ता तेल और गैस पहुँचाता है, जिससे चीन को समुद्री रास्ते बंद होने पर भी संसाधन मिलते रहें। रूस चीन के परमाणु हथियार कार्यक्रम के लिए यूरेनियम भी देता है।

अपने 2024 के चुनाव प्रचार के दौरान, ट्रम्प ने चीन और रूस को 'अलग-अलग' करने का वादा किया था। एक तरह से, राष्ट्रपति बनने के बाद वो पुतिन के साथ दोस्ताना रिश्ते बनाकर ऐसा करने की कोशिश कर रहे हैं। लेकिन ट्रम्प चाहे कुछ भी करें, पुतिन का रूस कभी भी ऐसा देश नहीं बन पाएगा जो यूरोप और अमेरिका के लिए ख़तरा न हो। यूरोप को रूसी सरकार की ताक़त को रोकने के लिए काम करना जारी रखना होगा, और वो भी बिना ज्यादा अमेरिकी मदद के। यूरोपीय नेताओं को ये भी समझना होगा कि वो ये सब ट्रांसअटलांटिक समझौते के तहत कर रहे हैं, जिसके लिए नाटो सबसे अच्छा मंच है, या फिर अमेरिका के उन सहयोगियों के साथ मिलकर जो विदेश नीति, सेना और रक्षा उद्योग के जानकार हैं।

सबसे पहले ज़रूरी है कि हथियारों का उत्पादन बढ़ाया जाए। कुछ लोग इसे एक आसान काम बताते हैं, लेकिन ये इतना आसान नहीं है। अगर नीति बनाने वाले लोग यूरोप की अर्थव्यवस्था को बेहतर किए बिना उसकी सुरक्षा पर ध्यान देने लगेंगे, तो वो उन लोगों को बढ़ावा देंगे जो ज्यादा रक्षा ख़र्च के ख़िलाफ़ हैं और पुतिन को शांत करने की बात करते हैं।

अमेरिका और यूरोप को रूस के 'शैडो वॉर' का भी सामना करना पड़ेगा। मॉस्को ने लोकतंत्र की नींव को कमज़ोर करने के लिए कई तरीके खोज निकाले हैं, जिनमें तोड़फोड़ करना, हत्याएं करवाना, झूठी खबरें फैलाना और चुनावों में हस्तक्षेप करना शामिल है। क्रेमलिन को इन तरीकों पर गर्व है, और वो यूक्रेन में युद्धविराम होने के बाद भी इनका इस्तेमाल करता रहेगा। रूस के साथ 'हाइब्रिड वॉर' को रोकने का कोई समझौता नहीं है, इसलिए ऐसा कोई समझौता करना ज़रूरी है। अमेरिका और यूरोप को काउंटर-इंटेलिजेंस, आतंकवाद और संगठित अपराध से लड़ने में आने वाली पीढ़ियों तक निवेश करना होगा। यूरोप में कट्टरपंथी इस्लाम और चरमपंथी संगठनों के पनपने से रूस को अपना खेल खेलने के लिए बढ़िया माहौल मिल गया है।

लेकिन रूस को रोकने के साथ-साथ, पश्चिमी देशों और ख़ासकर यूरोप को रूस के बारे में एक अलग तरह से सोचना होगा। पुतिन के बाद रूस जिन नेताओं के हाथ में आएगा, उनके सामने कई मुश्किलें होंगी। सालों तक सेना पर ज़रूरत से ज्यादा पैसा ख़र्च किया गया है, आधुनिक तकनीक तक पहुंच कम हो गई है, चीन पर बहुत ज्यादा निर्भरता बढ़ गई है और यूक्रेन में युद्ध ने पहले से ही जनसंख्या के रुझानों को बिगाड़ दिया है। रूस की सेना, खुफिया विभाग और पुलिस ने यूक्रेन में युद्ध में काफ़ी पैसा लगाया है और उससे उन्हें फ़ायदा भी हुआ है, इसलिए पुतिन के बाद जो नेता आएंगे, उनके लिए अतीत से नाता तोड़ना आसान नहीं होगा। यहाँ तक कि सबसे समझदार रूसी भी चीन के साथ दुश्मनी नहीं चाहेंगे। लेकिन रूसी अधिकारियों में एक बड़ा तबका ऐसा भी है जो जानता है कि यूक्रेन में युद्ध एक ग़लती थी और वो पुतिन की विरासत को धीरे-धीरे ख़त्म करना चाहते हैं, लेकिन वो ऐसा तभी करेंगे जब उन्हें लगेगा कि पश्चिमी देशों ने भी अपने दरवाज़े खोल दिए हैं।

रूस के प्रति पश्चिमी देशों का रवैया बदलना आसान नहीं होगा, क्योंकि ट्रम्प ने ट्रांसअटलांटिक गठबंधन को कमज़ोर कर दिया है। यूरोप के अंदर भी, अलग-अलग सरकारों की रूस के बारे में अलग-अलग राय है। लेकिन जो यूरोपीय नेता और अमेरिकी राजनीतिज्ञ ट्रम्प की राह पर नहीं चलना चाहते, वो एक स्थिर सुरक्षा समझौते की कल्पना करके शुरुआत कर सकते हैं।

अगर हालात ऐसे ही रहे, तो नाटो और रूस दोनों जल्द ही हथियारों से पूरी तरह लैस हो जाएंगे, जिनमें टैंक और ड्रोन जैसे हथियार भी शामिल हैं, और हाइपरसोनिक मिसाइलों जैसे परमाणु हथियार भी। ऐसे में जो ख़तरे पैदा होंगे, उनसे शीत युद्ध के दौरान भी दुनिया वाक़िफ़ थी, और उसका हल भी वही है: हथियारों पर नियंत्रण, जिसके लिए समझौते का पालन करने के लिए मज़बूत व्यवस्था और आपातकाल में बात करने के लिए हॉटलाइन होनी चाहिए। अगर पश्चिमी और रूसी बातचीत करने वाले आपस में भरोसा पैदा कर पाते हैं, तो अगला कदम ऐसे समझौते पर साइन करना होगा जिससे पारंपरिक और परमाणु हथियारों की संख्या में कमी लाई जा सके। ऐसा समझौता अमेरिका-रूस सामरिक हथियार कटौती संधि की तरह हो सकता है, जिसकी मियाद 2026 में ख़त्म हो रही है, या फिर यूरोप में पारंपरिक सशस्त्र बलों की संधि की तरह, जिसे नाटो और रूस ने 2023 में निलंबित कर दिया था। अगर रूस दूसरे देशों में लोकतंत्र को कमज़ोर करने की कोशिशें छोड़ देता है, तो दोनों पक्ष एक-दूसरे की घरेलू राजनीति में दख़ल देना भी बंद कर सकते हैं।

आर्थिक रिश्ते कभी रूस और पश्चिमी देशों दोनों के लिए फ़ायदेमंद थे। जब तक पुतिन सत्ता से हटेंगे, यूरोप शायद रूस के सामान पर अपनी निर्भरता ख़त्म कर चुका होगा। अगर ऐसा होता है, तो रूस से कुछ कच्चे माल का आयात फिर से शुरू करने से यूरोप की आज़ादी को कोई ख़तरा नहीं होगा, बल्कि यूरोप की सप्लाई लाइन और बेहतर हो जाएगी। व्यापारिक रिश्ते बहाल होने से रूस को भी फ़ायदा होगा, क्योंकि तब उसे सिर्फ़ चीन के बाज़ार पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा।

लेकिन यूक्रेन पर पुतिन ने जो युद्ध थोपा है, उसके बारे में बात किए बिना रूस और पश्चिमी देशों के बीच कोई समझौता नहीं हो सकता। अगर मॉस्को और नाटो मिसाइलों पर नियंत्रण के लिए बातचीत शुरू भी कर दें, तो भी कोई नई व्यवस्था नहीं बन पाएगी, क्योंकि कीव अब भी मिसाइलें बना रहा है। रूस के साथ आर्थिक रिश्ते ठीक करने के लिए कोई भी योजना तभी सफल हो सकती है, जब उससे यूक्रेन के पुनर्निर्माण के लिए या किसी और तरह से मुआवज़ा देने के लिए पैसे मिल सकें।

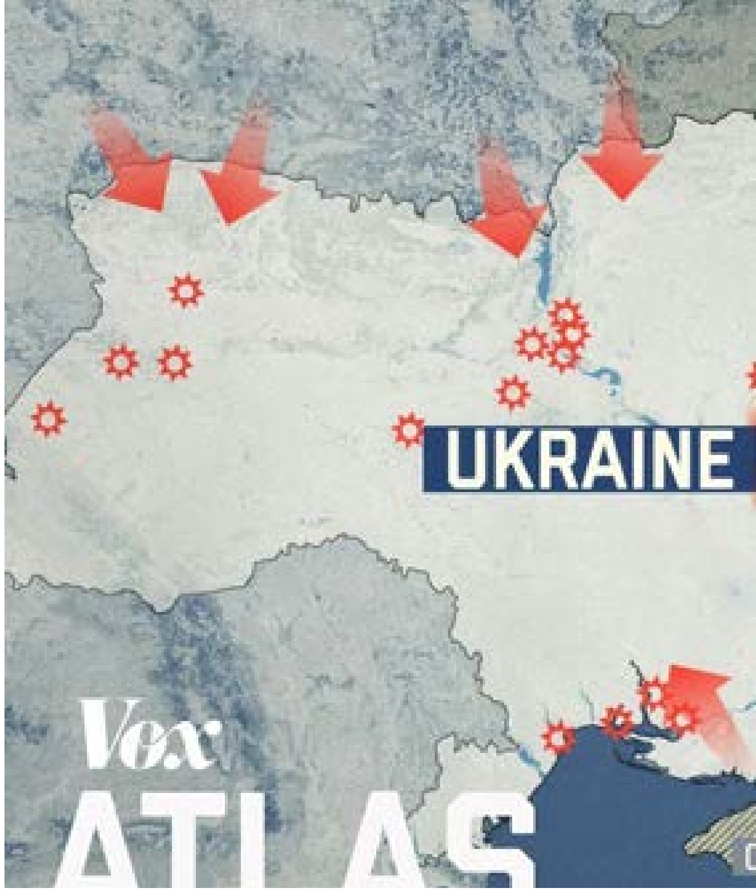

मॉस्को शायद कभी भी किसी दस्तावेज़ में 'मुआवज़ा' शब्द का इस्तेमाल करने के लिए तैयार नहीं होगा। लेकिन यूरोप को बेचे जाने वाले रूसी सामान पर एक ख़ास टैक्स लगाकर कुछ सालों के लिए यूक्रेन के लिए पैसा जुटाया जा सकता है। या फिर दुनिया के देश मिलकर यूक्रेन के पुनर्निर्माण के लिए एक फ़ंड बना सकते हैं जिसमें रूस अपनी जीडीपी का एक हिस्सा हर साल जमा करे। रूसी अर्थव्यवस्था जितनी तेज़ी से बढ़ेगी, यूक्रेन को उतना ही ज्यादा पैसा मिलेगा, जिससे यूरोपीय संघ को रूसी सामान ख़रीदने और देश में निवेश करने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा।

पुतिन के जाने के बाद रूस के बारे में कोई भी रणनीति बनाते समय कई यूरोपीय देश चाहेंगे कि यूक्रेन को भी इसमें शामिल किया जाए। कीव के कई लोगों को शायद यही लगे कि रूस को कमज़ोर या बर्बाद कर देना ही सबसे अच्छा नतीजा होगा। लेकिन ऐसा होने से यूरोप को कोई फ़ायदा नहीं होगा, क्योंकि एक विशाल पड़ोसी देश का पतन होना ख़तरनाक है जिसके पास विनाश के हथियार भरे पड़े हैं। पुतिन यूक्रेन को नाटो में शामिल करने के सख़्त ख़िलाफ़ हैं, और उनके बाद आने वाले नेता भी शायद ऐसा ही रवैया अपनाएं। लेकिन ज्यादा समझदार रूसी नेता शायद ये समझ जाएं कि यूक्रेन का नाटो में शामिल होना रूस के लिए उतना ख़तरनाक नहीं है जितना कि एक ऐसा यूक्रेन जो बदला लेने पर

तुला हो और नाटो के नियमों को न माने।

रूस के लोगों को एक नई दिशा दिखाने के लिए, पश्चिमी देशों को उन रास्तों को फिर से खोलना होगा जो युद्ध के दौरान बंद हो गए थे। रूसी लोगों और वहाँ के नेताओं को ये समझना होगा कि क्रेमलिन रूस को पश्चिम से दूर करना चाहता है, न कि पश्चिम रूस से दूर रहना चाहता है। जिन कलाकारों, वैज्ञानिकों, बुद्धिजीवियों और खिलाड़ियों ने युद्ध का प्रचार नहीं किया है, उन्हें सिर्फ़ रूसी होने की वजह से Boycott नहीं करना चाहिए। यूरोप को अपने वीज़ा नियमों में भी बदलाव करना होगा, क्योंकि अभी तो रूसियों का यूरोप में जाना लगभग नामुमकिन है।

पश्चिमी नेताओं और अधिकारियों को खुलकर ये बात कहनी होगी कि वो रूस के लोगों के ख़िलाफ़ नहीं हैं, बल्कि सिर्फ़ पुतिन की उन नीतियों का विरोध करते हैं जिन्होंने रूस को बर्बाद कर दिया है। उन्हें ये भी समझाना होगा कि पुतिन के फ़ैसलों से रूसी लोग कम अमीर और कम सुरक्षित हो गए हैं। पश्चिमी देशों के अधिकारियों को क्रेमलिन के उन अफ़सरों और विदेश नीति के जानकारों से भी लगातार संपर्क में रहना होगा जो पुतिन के बाद रूस को चलाएंगे। वो इसकी शुरुआत अंतरराष्ट्रीय मंचों से कर सकते हैं, जहाँ वो रूस के साथ मिलकर उन मुद्दों पर बात कर सकते हैं जो दोनों के लिए ज़रूरी हैं, जैसे समुद्र और हवाई क्षेत्र में टकराव रोकना। बेशक, कई रूसी अधिकारी जासूसी करने की कोशिश करेंगे, लेकिन इसमें कोई नई बात नहीं है।

पुतिन के बाद रूस कैसा होगा, ये सोचना शायद अभी बहुत दूर की बात लगे, ख़ासकर जब उन्हें हटाने की कोशिशें नाकाम हो चुकी हैं। येवगेनी प्रिगोझिन के विद्रोह ने भी दिखा दिया कि ऐसा करना कितना मुश्किल है। रूस के साथ फिर से रिश्ते जोड़ने के बारे में सोचना भी कुछ लोगों को पसंद नहीं आएगा। ट्रम्प के दोबारा राष्ट्रपति बनने से पहले पश्चिमी देशों ने यूक्रेन के मुद्दे पर एकजुटता दिखाई थी, जो एक बड़ी कामयाबी थी। अब, जब व्हाइट हाउस में पुतिन का समर्थन करने वाला राष्ट्रपति है, तो शायद यूरोपीय एकता और भी ज़रूरी लगे। लेकिन नाटो के पूर्वी हिस्से में मौजूद कई देश पुतिन के जाने के बाद भी रूस के साथ दोस्ती नहीं करना चाहते।

फिर भी, उन्हें ऐसा करना होगा। पश्चिमी नेताओं को अपने नागरिकों की चिंताओं को समझना होगा और उनका हल निकालना होगा, क्योंकि उनमें से कई रूस के साथ एक लंबी और महंगी लड़ाई नहीं चाहते हैं। और रूस के साथ अच्छे रिश्ते की कल्पना करना सिर्फ़ एक मज़ाक नहीं होगा। इससे रूस को बदलने में भी मदद मिल सकती है। भले ही पुतिन पश्चिमी देशों के साथ दोस्ताना रवैया न अपनाएं, लेकिन इससे उनके जाने के बाद उनकी सरकार कमज़ोर हो सकती है। पुतिन ने अपना कोई उत्तराधिकारी नहीं चुना है, क्योंकि उन्हें डर है कि इससे उनकी ताक़त कम हो जाएगी। अगर वो किसी को चुनते भी हैं, तो वो उनसे कमज़ोर होगा, जिससे दूसरी राजनीतिक ताक़तों को आगे बढ़ने का मौका मिल जाएगा। अगर कोई उत्तराधिकार की लड़ाई नहीं भी होती है, तो भी पुतिन के बाद रूस में 1950 के दशक में स्टालिन की मौत के बाद जैसा दौर आ सकता है, जब सामूहिक नेतृत्व के आने से उदारवाद और समझदारी की तरफ़ रुख़ किया गया था।

अमेरिका में हाल ही में हुए नेतृत्व परिवर्तन के लिए यूरोप तैयार नहीं था। ऐसा ही क्रेमलिन में भी हो सकता है, अगर पश्चिमी देश ये न सोचें कि पुतिन के बाद रूस के साथ उनके रिश्ते कैसे होंगे। ऐसा ज़रूरी नहीं है कि हमेशा युद्ध की स्थिति बनी रहे। लेकिन अगर पश्चिमी देशों के नेता एक अलग रास्ते पर बात करने में देरी करेंगे, तो वो पुतिन को ही बढ़ावा देंगे, जो पश्चिमी देशों के साथ टकराव को हमेशा के लिए बनाए रखना चाहते हैं।

(ये लेख अलेक्जेंडर गबुएव के 'द रसिया दैट पुतिन मेड' नामक फ़ॉरेन अफ़ेयर्स में छपे लेख से लिए गए तथ्यों पर आधारित है, और उसका संपादित रूप है।)

भारत पर हमला
अब आगे क्या?

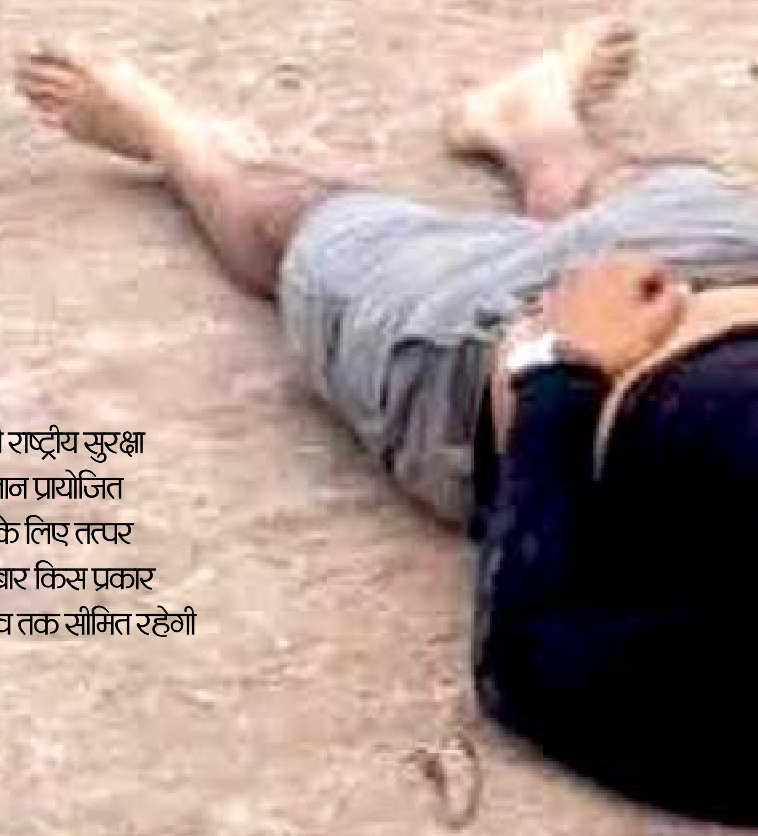

पहलगाम में हुए बर्बर आतंकी हमले ने भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा रणनीति को फिर से सक्रिय कर दिया है। पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवाद अभी भी भारतीय हितों को चुनौती देने के लिए तत्पर है, यह स्पष्ट है। अब प्रश्न यह है कि भारत इस बार किस प्रकार प्रत्युत्तर देगा? क्या यह प्रतिक्रिया कूटनीतिक दबाव तक सीमित रहेगी या इसमें निर्णायक सैन्य कार्रवाई शामिल होगी?

देश मांगे जस्टिस

पहलगाम में निर्दोष पर्यटकों की निर्मम हत्या ने पूरे देश को झकझोर कर रख दिया है। कश्मीर की लहूलुहान धरती इंसाफ मांग रही है, हर भारतीय का दिल आक्रोश से भरा है। क्या सरकार आतंकवाद के इन सौदागरों को करारा जवाब देगी? क्या पीड़ितों के परिवारों को न्याय मिलेगा? 'देश मांगे जस्टिस' – यह लेख पहलगाम की त्रासदी और भारत के सामने खड़ी चुनौतियों पर एक गंभीर विश्लेषण है।

श्रीराजेश

22 अप्रैल की दोपहर, जब बैसरान के हरे-भरे मैदान के किनारे बसे जंगलों से आतंक के सौदागर निकल पड़े, कश्मीर की शांत वादियां एक बार फिर खून से लाल हो गईं। वादियों में सन्नाटा चीख उठा, मासूमियत का गला घोंटा गया। ये आतंकी पुरुष पर्यटकों से उनका धर्म पूछते, मानवता को शर्मसार करते हुए, सिर्फ धार्मिक पहचान के आधार पर निर्दयता से मौत का फरमान सुनाते, और फिर गोलियां बरसतीं।

जंगल की भयावहता में गूंजती महिलाओं की चीखें, अपने प्रियजनों की रक्षा के लिए की गई व्यर्थ पुकारें, देर तक घाटी की ठंडी हवाओं में तैरती रहीं – मानो हर पत्ती, हर कंकड़ उस क्रूरता का गवाह बन गया हो। हत्यारे जंगलों में गायब हो गए थे, लेकिन उस क्षण ने न जाने कितने दिलों को जीवनभर के लिए शोक में डुबो दिया था। आतंक के साए में भागते लोगों को भारतीय सैनिकों ने अपने सुरक्षित हाथों में लिया, उन्हें ढांढस बंधाते हुए – मानो मानवता की अंतिम मशाल थामे हुए।

कश्मीर घाटी, जो अक्सर भारत से अलगाव की ललक और सामान्य जीवन की चाह के द्वंद के बीच झूलती रही है, उस दिन

पूरी तरह सिहर उठी। उस शाम जब पहलगाम में शव पहुंचे, तो शोक की एक ठंडी चादर ने पूरे शहर को ढँक लिया। कुछ घंटे पहले जो परिवार खुशी-खुशी बैसरान की ओर निकले थे, अब वे असहाय होकर अपने टूटे हुए संसार के मलबे पर विलाप कर रहे थे। महिलाओं और बच्चों के चेहरों पर अव्यक्त पीड़ा स्थायी हो गई थी – मानो हर आंसू भी अब छोटा पड़ गया हो, हर सिसकी उस दर्द को बयान करने में असमर्थ हो।

हिंसा की वह बर्बरता इतनी चौंकाने वाली थी कि उस क्षण पहचान और राज्य के दर्जे पर होने वाली तमाम बहसें गौण हो गईं। कश्मीर के प्रमुख अखबारों में छपी खबरें इस अमानवीयता के खिलाफ मूक चीख बन गईं। होटल और लॉज खाली हो चले, पर्यटन का रंगीन सपना एक ही झटके में बिखर गया। घाटी, जो स्वर्ग का टुकड़ा कहलाती थी, एक बार फिर खून के धब्बों से दागदार हो गई।

जैसे-जैसे विवरण सामने आए, दिल दहला देने वाली सच्चाई स्पष्ट होती गई – आतंकियों ने गैर-मुस्लिम पुरुषों को निशाना बनाया और महिलाओं को छोड़ दिया। इस नृशंसता के पीछे निहित संदेश साफ था - नियंत्रण रेखा से मात्र कुछ किलोमीटर दूर, पहलगाम जैसे पर्यटन स्थल को निशाना बनाकर आतंकियों ने दुनिया को यह दिखाने की कोशिश की कि उनकी शक्ति अब भी जिंदा है, और उनकी नफरत अब भी गहरी है।

एक पूर्व सैन्य अधिकारी ने ठीक ही कहा – यह हमला केवल हिंसा नहीं था, बल्कि एक राजनीतिक ऐलान था। पाकिस्तान ने अब भी कश्मीर को लेकर अपना रवैया नहीं छोड़ा है और वह इस कटु सच्चाई को अंतरराष्ट्रीय मंच पर याद दिलाना चाहता है कि कश्मीर की त्रासदी अभी समाप्त नहीं हुई। भारत द्वारा पाकिस्तान के साथ अपने संबंधों को सीमित करने के बावजूद, पाकिस्तान ने अपना इरादा नहीं बदला।

इस दुखांतिका में, इंसानियत कराह उठी – और कश्मीर, जिसने सदा से फूलों और फिरदौस की भूमि कहलाने का सपना देखा था, एक बार फिर अपने ही खून के आँसुओं में भीग गया। वादियों में दर्द था, हवाओं में चीखें, और दिलों में अनगिनत सवाल।

पाकिस्तान के सेनाध्यक्ष जनरल असीम मुनीर के भड़काऊ भाषण के कुछ दिन बाद – जिसमें उन्होंने यह कहा था कि हिंदू और मुसलमान एक साथ नहीं रह सकते, मुसलमानों के रहन-सहन, संस्कृति, उद्देश्य सब अलग है, इसीलिए दो कौमी नजरिया के तहत पाकिस्तान बना और कश्मीर को पाकिस्तान की 'जीवन रेखा' बताते हुए पुराना नारा दोहराया था – कश्मीर में हुआ यह आतंकी हमला एक संयोग नहीं, बल्कि एक सोची-समझी साजिश का हिस्सा था। योजना भले ही पहले से बनाई जा रही हो, लेकिन हमले का समय ऐसा चुना गया था कि वह अमेरिकी उपराष्ट्रपति जेडी वेंस की भारत यात्रा के साथ मेल खा सके। मानो, आतंक के साए में दुनिया को एक संदेश देना था।

जम्मू-कश्मीर में आतंकवाद पर नियंत्रण पाकिस्तान की सेना और उसकी खुफिया एजेंसी आईएसआई के हाथ में ही है। इस हमले का मकसद साफ था – दुनिया को यह दिखाना कि भारतीय सरकार का

यह दावा गलत है कि आतंकवाद लगभग खत्म हो चुका है और राज्य में लौटती सामान्य स्थिति, खासकर फलता-फूलता पर्यटन, अब भी असुरक्षित है।

लेकिन, भारत ने इस चुनौती का जवाब भी उतनी ही स्पष्टता और दृढ़ता के साथ दिया। 24 अप्रैल को बिहार के मधुबनी में एक जनसभा को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अंग्रेजी में बोलने का विकल्प चुना – ताकि दुनिया भर तक उनका संदेश साफ-साफ पहुंचे। उनकी आवाज में दर्द था, लेकिन संकल्प की एक चट्टान भी थी। उन्होंने कहा, 'बिहार की इस धरती से मैं पूरी दुनिया से कहना चाहता हूं – भारत हर आतंकवादी और उनके समर्थकों को ढूंढेगा, उन्हें सजा देगा, चाहे वे धरती के किसी भी कोने में छिपे हों। भारत की भावना आतंकवाद से कभी नहीं टूटेगी। हम सुनिश्चित करेंगे कि न्याय हो। आज पूरा देश इस संकल्प में एकजुट है। जो भी मानवता में विश्वास रखते हैं, वे हमारे साथ खड़े हैं। मैं उन देशों और उनके नेताओं का आभार व्यक्त करता हूं जो इस कठिन समय में भारत के साथ हैं।'

अब गेंद फेंकी जा चुकी थी। सवाल अब अगर का नहीं था, बस कब का था – और भारत की प्रतिक्रिया गंभीर लेकिन ठोस होने वाली थी। न्याय की घड़ी टिक-टिक कर रही थी।

प्रधानमंत्री मोदी ने अपनी सऊदी अरब यात्रा को बीच में ही छोड़ दिया। उधर, गृह मंत्री अमित शाह 23 अप्रैल को श्रीनगर रवाना हो गए। उसी शाम सुरक्षा मामलों पर कैबिनेट कमेटी की बैठक हुई, जिसमें पाकिस्तान के खिलाफ तुरंत कुछ सख्त फैसले लिए गए। फैसले सिर्फ कागजों पर नहीं लिखे गए थे, बल्कि भारत के इरादे की गवाही दे रहे थे।

बैठक में तय किया गया कि 1960 की सिंधु जल संधि को अस्थायी रूप से निलंबित किया जाएगा। अटारी में स्थित एकीकृत चेक पोस्ट को बंद करने का निर्णय हुआ। इसके अलावा, पाकिस्तानी नागरिकों को अब सार्क वीज़ा छूट योजना के तहत भारत आने की अनुमति नहीं दी जाएगी और जिन लोगों को पहले से वीजा मिला था, वे भी अब रद्द माने जाएंगे। दरवाजे बंद हो रहे थे, रिश्ते ठंडे पड़ रहे थे, लेकिन भारत अपने संकल्प पर अडिग था।

इतना ही नहीं – नई दिल्ली स्थित पाकिस्तानी उच्चायोग में रक्षा, नौसेना और वायु सेना के सलाहकारों को भारत छोड़ने के लिए एक सप्ताह का समय दिया गया है। भारत भी इस्लामाबाद से अपने उच्चायोग के सैन्य सलाहकारों को वापस बुलाएगा। दोनों देशों के उच्चायोगों में मौजूद अधिकारियों की संख्या 1 मई तक घटाकर 55 से 30 कर दी जाएगी।

साफ था कि भारत अब अपने शब्दों के साथ-साथ कार्यों से भी यह दिखाना चाहता है कि आतंकवाद को अब बर्दाश्त नहीं किया जाएगा – चाहे इसके लिए कूटनीतिक मोर्चे पर कितनी भी बड़ी कीमत क्यों न चुकानी पड़े। वादियों में पसरा सन्नाटा एक तूफान से पहले की शांति जैसा था। भारत चुप था, लेकिन अंदर ही अंदर एक ज्वाला धधक रही थी - न्याय की ज्वाला, बदला लेने की ज्वाला, और सबसे बढ़कर, इंसानियत को बचाने की ज्वाला।

कश्मीर के रुदन भारत के आक्रोश को भड़का दिया है।

हालाँकि विश्व बैंक द्वारा मध्यस्थता और विवाद निपटारे के लिए 'तटस्थ' विशेषज्ञों की व्यवस्था के बावजूद, सिंधु जल संधि मूल रूप से एक द्विपक्षीय समझौता है। अब तक यह भारत के संयम के कारण ही प्रभावी रही है, यहाँ तक कि युद्ध और तनाव के दौर में भी। यह संयम, एक मौन प्रतिज्ञा की तरह था, कि मानवता पहले है। लेकिन अब, पहलगाम के रक्त रंजित मैदानों से उठी चीखों के बाद, भारत ने अपनी रणनीति बदल दी है।

भारत अब छोटे बांधों के निर्माण, रण-ऑफ-रिवर परियोजनाओं, नहरों के विस्तार और मालवाहक जलमार्गों जैसी गतिविधियों के लिए स्वतंत्र है। यह कोई कागजी कार्रवाई नहीं, बल्कि एक ठोस निर्णय है, जो पाकिस्तान को बड़ी मुश्किलों का सामना कराएगा, जो पहले से ही पानी और बिजली की गंभीर कमी से जूझ रहा है। कराची जैसे बड़े शहर भीषण गर्मी और जल संकट से परेशान हैं, जिसे प्रशासनिक अव्यवस्था ने और गहरा दिया है। हर बूंद कीमती है, और अब भारत तय करेगा कि किसे कितनी मिलेगी।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने स्पष्ट कर दिया है कि दोषियों को किसी भी हाल में बख्शा नहीं जाएगा।

यह कोई खोखला वादा नहीं, बल्कि एक संकल्प है, जिसे गृह मंत्री अमित शाह और रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने भी पूरी मजबूती से दोहराया। भारत के सैन्य विकल्पों पर गहन विचार हो रहा है, क्योंकि जल्दबाजी में लिया गया कदम अपेक्षित नतीजे नहीं ला सकता।

पहलगाम हमले के बाद पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर के ऊपर अचानक बढ़ी सैन्य गतिविधियों से अंदाजा लगाया जा सकता है कि भारत अपनी रणनीति पर गंभीरता से काम कर रहा है। यह कोई दिखावा नहीं, बल्कि एक तैयारी है, एक चेतावनी है उन ताकतों को जो भारत की शांति को भंग करना चाहते हैं। पुलवामा हमले के बाद भारत का अनुभव बताता है कि दुश्मन गतिविधि बढ़ाकर भारत के विकल्पों को सीमित करना चाहता है। हर चाल का जवाब देने के लिए भारत तैयार है।

फिलहाल, लक्षित सैन्य कार्रवाई – जैसे विशेष आतंकवादी ठिकानों या लश्कर-

'हाल के वर्षों में नागरिकों पर हुआ सबसे बड़ा हमला है। इस हमले से कश्मीर की शांति और सौहार्द को नुकसान पहुंचाने की कोशिश की गई है, लेकिन कश्मीर की जनता आतंकवादियों के सामने झुकेगी नहीं। इस हमले के पीछे पाकिस्तान की भूमिका को लेकर अंतरराष्ट्रीय समुदाय को गंभीरता से विचार करना चाहिए।'

उमर अब्दुल्ला, मुख्यमंत्री, जम्मू व कश्मीर

'यह हमला मानवता पर हमला है। सरकार आतंकवादियों और निर्दोष नागरिकों के बीच अंतर करे। सरकार को सावधानी से कदम उठाने चाहिए ताकि निर्दोष लोगों को इसका खामियाजा न भुगतना पड़े। कश्मीरियों को आतंकवाद के खिलाफ एकजुट होकर खड़ा होना चाहिए।'

महबूबा मुफ्ती, पीडीपी सुप्रीमो

'कश्मीर में सामान्य स्थिति महज एक मृगतृष्णा साबित हुई है। कश्मीरी लोग पर्यटकों, तीर्थयात्रियों और आम नागरिकों पर हमलों का समर्थन नहीं करते। पहलगाम की घटना एक नरसंहार है। ऐसे कृत्य न केवल मानवता के खिलाफ हैं, बल्कि क्षेत्र की अर्थव्यवस्था पर भी गहरा असर डालते हैं।'

अनुराधा भसीन, प्रबंध संपादक, कश्मीर टाइम्स

'यह कश्मीर के रक्तरंजित इतिहास का एक और दुखद दिन है, जब यहां आए पर्यटकों को बेरहमी से मार दिया गया। कश्मीर के पीड़ित और असहाय लोग जानते हैं कि ऐसी त्रासदियाँ प्रियजनों के दिलों पर कितनी गहरी चोट करती हैं।'

मीरवाइज़ उमर फारूक, अध्यक्ष, हुर्रियत कॉन्फ्रेंस

'यह एक अत्यंत भयावह और क्रूर घटना है। एक कश्मीरी और राजनेता के रूप में, एक स्थानीय निवासी के रूप में, हमारी पहचान मेहमानों का स्वागत करने वाले लोगों की रही है। इन आतंकियों ने हमारी इस पहचान को कलंकित कर दिया है। यह त्रासदी हमारी परंपरा को लगभग अकल्पनीय बना देती है।

सज्जाद लोन, पीपुल्स कॉन्फ्रेंस

ए-तैयबा के अड्डों पर हवाई हमले – एक व्यवहारिक विकल्प के तौर पर सामने आ रहे हैं। राफेल लड़ाकू विमानों की मौजूदगी ने भारत को एलओसी या अंतरराष्ट्रीय सीमा पार किए बिना ही सटीक हमलों की क्षमता दी है। यह कोई धमकी नहीं, बल्कि सच्चाई है, कि भारत अब अपने दुश्मनों को उनके घर में घुसकर मारने की क्षमता रखता है। अब यह तय माना जा रहा है कि भारत की प्रतिक्रिया न केवल तीखी होगी, बल्कि समय चाहे जो हो, उसका असर गहरा होगा।

यह हमला ऐसे समय हुआ जब अमेरिकी उपराष्ट्रपति जेडी वेंस अपने परिवार के साथ भारत दौरे पर थे, और इसकी याद दिलाता है 2001 के चित्तीसिंहपुरा नरसंहार की, जब तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन के दौरे से ठीक पहले 35 सिखों की हत्या कर दी गई थी। यह कोई इत्तेफाक नहीं, बल्कि एक पैटर्न है, कि आतंकवादी हमले अक्सर उच्च-स्तरीय यात्राओं के समय ही क्यों होते हैं? उस समय वाजपेयी सरकार को बदनाम करने की कोशिश नाकाम रही थी।

क्लिंटन ने इस्लामाबाद में केवल कुछ घंटे बिताए थे, जबकि भारत में संसद को संबोधित किया और कारगिल युद्ध के समय पाकिस्तान को एलओसी से पीछे हटने के लिए मनाने में अपनी भूमिका का जिक्र किया था। यह कोई भूलने वाली बात नहीं, बल्कि एक इतिहास का पाठ है, कि भारत ने हमेशा शांति का रास्ता चुना है, लेकिन जब बात सुरक्षा की आती है तो वह किसी भी हद तक जा सकता है।

इस बार भी, राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने बिना देर किए प्रधानमंत्री मोदी से बात कर भारत को पूरा समर्थन देने की घोषणा की। उन्होंने कहा, 'प्रधानमंत्री मोदी और भारत के लोगों के साथ हमारा पूरा समर्थन और संवेदना है।' यह कोई कूटनीतिक बयान नहीं, बल्कि एक दोस्ती का वादा है, कि दुनिया भर के लोकतंत्र भारत के साथ खड़े हैं।

23 अप्रैल को अमित शाह ने मृतकों को श्रद्धांजलि दी, शोक संतप्त परिवारों से मिले और बैसरान मैदान का हवाई निरीक्षण किया। यह दौरा न केवल हमले के स्थल का जायजा लेने के लिए था, बल्कि यह भी दिखाने के लिए था कि सरकार आतंकवाद के खिलाफ मजबूती से खड़ी है। चेहरे पर दुःख था, लेकिन आंखों में दृढ़ता, कि भारत किसी भी हाल में नहीं झुकेगा।

प्रधानमंत्री मोदी ने भी अपनी तत्काल यात्राओं को स्थगित कर दिया और एक्स (पूर्व ट्विटर) पर संवेदना जताते हुए कहाः 'इस जघन्य कृत्य के अपराधियों को सजा जरूर मिलेगी। उनका बुरा इरादा कभी सफल नहीं होगा। आतंकवाद से लड़ने का हमारा संकल्प अटूट है और और भी दृढ़ होगा।' यह कोई राजनीतिक भाषण नहीं, बल्कि

'यह हमला निर्दोष नागरिकों और पर्यटकों पर किया गया है। यह हम सभी पर हमला है। यह केवल हमारी अर्थव्यवस्था को नहीं, बल्कि कश्मीर में शांति प्रक्रिया और स्थिरता को भी बाधित करेगा।'

वहीद पारा, विधायक, पीपुल्स डेमोक्रेटिक पार्टी

'इस अमानवीय कृत्य ने पूरी घाटी की अंतरात्मा को झकझोर दिया है। जो लोग हमारे वतन में शांति, सुंदरता और कश्मीरी मेहमाननवाज़ी की उम्मीद लेकर आए थे, उन्हें यहां क्रूरता और आतंक का सामना करना पड़ा।'

शकील कलंदर, अध्यक्ष, एफसीआईके

एक प्रण है, कि भारत अपने नागरिकों की सुरक्षा के लिए जान की बाजी लगा देगा। शाह घाटी और जम्मू क्षेत्र में सुरक्षा समीक्षा कर और आतंकियों के खिलाफ बड़े स्तर पर अभियान की रणनीति बनाकर दिल्ली लौटे हैं।

हमले में शामिल आतंकियों में से तीन के रेखाचित्र जारी किए गए हैं, जिनमें से दो स्थानीय बताए जा रहे हैं। यह तथ्य विशेष चिंता का कारण है, क्योंकि यह दर्शाता है कि भले ही आतंकी संगठनों में भर्ती दर कम हुई हो, लेकिन अलगाववादी भावना अभी भी कुछ हिस्सों में सुलग रही है। ये आग कब भड़क उठे, कोई नहीं जानता। इस हमले के बाद सुरक्षा बलों ने व्यापक तलाशी अभियान शुरू कर दिया है। ऐसा संदेह है कि कुछ आतंकवादी अब भी जंगलों में छिपे हो सकते हैं और सुरक्षा बलों पर नजर बनाए हुए हैं। हर कदम पर खतरा है, और भारत को हर पल सतर्क रहना होगा।

हालांकि महबूबा मुफ्ती की पीपुल्स डेमोक्रेटिक पार्टी (पीडीपी) जैसे दलों ने हमलों के खिलाफ बंद का समर्थन किया है, लेकिन उनकी शिकायत आधारित राजनीति ने अलगाव और असंतोष की भावना को बल ही दिया है। यह कोई रहस्य नहीं, बल्कि एक कड़वी सच्चाई है, कि कुछ राजनेता अपने राजनीतिक लाभ के लिए घाटी में अशांति का माहौल बनाए रखना चाहते हैं। वर्षों से चली आ रही यह नीति अब घाटी में आतंकवादी नेटवर्क के लिए एक संवेदनशील जमीन तैयार करने में योगदान दे रही है।

हुर्रियत नेताओं और हवाला फंडिंग नेटवर्क पर कार्रवाई के बाद, पाकिस्तान की सैन्य और खुफिया प्रतिष्ठान नई रणनीतियों की तलाश में हैं। पहलगाम जैसे हमलों के जरिये वह कश्मीर घाटी में उग्रवाद को फिर से जीवित करना चाहता है। यह कोई खेल नहीं, बल्कि एक साजिश है, कि पाकिस्तान कश्मीर को कभी भी चैन से नहीं रहने देगा। भले ही पाकिस्तान की नागरिक सरकार ने हमले में किसी भी तरह की संलिप्तता से इनकार किया हो, लेकिन यह सर्वविदित है कि सैन्य प्रतिष्ठान और आईएसआई अपने एजेंडे पर स्वतंत्र रूप से काम करते हैं, जिनकी जानकारी अक्सर नागरिक नेतृत्व को भी नहीं होती। यह कोई नई बात नहीं है, पाकिस्तान की राजनीति में सेना का दखल हमेशा से रहा है।

भारत ने अतीत में भी आतंकवादी हमलों के जवाब में सैन्य विकल्पों पर विचार किया था, परंतु तत्कालीन राजनीतिक नेतृत्व ने संयम दिखाया। 2001 संसद हमले के बाद प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने ऑपरेशन पराक्रम के तहत सीमाओं पर सैन्य जमावड़ा किया, लेकिन खुला युद्ध नहीं हुआ। 2008 के मुंबई हमलों के बाद तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के नेतृत्व में सैन्य विकल्पों पर विचार तो हुआ, परंतु अंततः कार्रवाई नहीं की गई। कारण कुछ भी रहे हों, लेकिन संयम का संदेश स्पष्ट था।

हालाँकि मोदी सरकार के आने के बाद, जवाबी नीति में निर्णायक बदलाव आया। 2015 म्यांमार ऑपरेशन में एनएससीएन-के विद्रोहियों के खिलाफ सफल सीमा पार हमले किए गए। 2016 में उरी हमला के बाद पहली बार सार्वजनिक रूप से सर्जिकल स्ट्राइक कर पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर में आतंकी लॉन्च पैड तबाह किए गए। 2019 के पुलवामा हमला के जवाब में बालाकोट एयरस्ट्राइक ने पाकिस्तान को बड़ा रणनीतिक संदेश दिया कि भारत अब आतंकवादी गतिविधियों को बिना प्रतिक्रिया के नहीं छोड़ेगा। यह कोई बदलाव नहीं, बल्कि एक क्रांति है, कि भारत ने अब चुप रहने की नीति त्याग दी है।

पहलगाम के घाव गहरे हैं, लेकिन भारत का संकल्प चट्टान की तरह अटल है। अब यह देखना होगा कि भारत अपनी इस प्रतिबद्धता को कैसे निभाता है।

पाकिस्तान भले ही इन हमलों से किसी नुकसान से इनकार करता रहा, पर ज़मीनी हकीकत कुछ और ही बयां करती है। बालाकोट क्षेत्र को डेढ़ महीने तक बंद रखना, जैसे झूठ को छुपाने के लिए किसी लाश को दफनाने की कोशिश हो। पर सच तो आखिर सच ही होता है, वो छिपता नहीं है, चीखता है।

अब वो दौर नहीं रहा जब भारत सिर्फ निंदा करता था, हाथ पर हाथ धरे बैठा रहता था। आज, भारत के पास सीमित संघर्ष और विशेष अभियानों के कई परिष्कृत विकल्प हैं – जैसे किसी कुशल शल्य चिकित्सक के पास मौजूद आधुनिक उपकरण। राफेल जैसे लड़ाकू विमानों ने तो मानो भारत के हौसले को पंख लगा दिए हैं। अब लंबी दूरी से भी अचूक वार करना मुमकिन है, दुश्मन की नींद हराम करना मुमकिन है।

पहलगाम के उस लहू-लुहान मंजर के बाद, भारत की प्राथमिकता है – उन आतंकवादियों के ज़हरीले नेटवर्क को जड़ से उखाड़ फेंकना, उन अलगाववादी भावनाओं को शांत करना जो ज़मीन के अंदर सुलग रही हैं, और दुनिया को पाकिस्तान के असली चेहरे से रूबरू कराना।

भारत अब उस दौर से बहुत आगे निकल चुका है, जब वह सिर्फ कूटनीतिक विरोध या प्रतीकात्मक प्रतिक्रिया तक सीमित रहता था। आज की भारतीय नीति में धैर्य भी है, दृढ़ता भी है और एक साफ-सुथरी सोच भी। ये सोच कहती है – 'बर्दाश्त की भी एक हद होती है'। पहलगाम जैसे हमलों का जवाब भी इसी सोच का हिस्सा होगा। आतंक के आकाओं को ऐसा सबक सिखाना है, कि उनकी आने वाली नस्लें भी खौफ से कांप उठें। हर विकल्प खुला है, हर रास्ते पर चलने को भारत तैयार है।

पाकिस्तानी 'डीप स्टेट' – यानी सेना और खुफिया एजेंसियों का वो मकड़जाल, जो दशकों से इस इलाके में अपना ज़हर घोल रहा है। वो सिर्फ क्षेत्रीय समीकरणों को ही नहीं बिगाड़ रहा, बल्कि दुनिया भर के ताक़तवरों को अपनी धौंस दिखाता है। वो बार-बार ये याद दिलाता है कि उसे नज़रअंदाज़ करना कितना भारी पड़ सकता है। पहलगाम में हुए खूनी खेल को भी इसी साज़िश का एक हिस्सा मानना होगा। वो भारत की चमक को फीका करना चाहता है, मोदी जी की मज़बूत छवि को मिटाना चाहता है। पर क्या वो ये समझता है कि आग से खेलने वाले अपने ही हाथ जला बैठते हैं?

पाकिस्तान ये जताना चाहता है कि वो आज भी इस इलाके में आग लगाने की ताकत रखता है। वो अमेरिका जैसे ताक़तवर देशों को भी ये संदेश देना चाहता है कि भले ही उसका दबदबा थोड़ा कम हो गया हो, पर उसके पुराने दोस्त और उसके नीतिगत तौर-तरीके अभी भी दुनिया की चाल को बदल सकते हैं। पर क्या वो ये नहीं जानता कि झूठ के पांव नहीं होते?

पर हाल के सालों में, पाकिस्तान की चालबाज़ियाँ ज्यादा काम नहीं आईं। अफ़ग़ानिस्तान में तालिबान के आने से उसे लगा कि उसे 'रणनीतिक गहराई' मिल गई, पर जल्द ही उसे पता चल गया कि तालिबान उसकी कठपुतली बनने को तैयार नहीं है। उलटा, तहरीक-

'सामान्य स्थिति' का खोखला दावा

पहलगाम नरसंहार ने 'सामान्य स्थिति' के सरकारी दावों की पोल खोल दी है, जिससे कश्मीर की जमीनी हकीकत उजागर हो गई है। यह हमला सुरक्षा में चूक, सरकारी विफलता और राजनीतिक अस्थिरता का परिणाम है। इस लेख में, हम कश्मीर के इस दर्दनाक सच को उजागर करते हैं और उन सवालों पर विचार करते हैं जिनका जवाब सरकार को देना है। क्या कश्मीर में कभी शांति स्थापित हो पाएगी?

22 अप्रैल, 2025... बैसरान घाटी, पहलगाम। हरे-भरे मैदान, पर्यटकों की चहल-पहल और हंसी-खुशी का माहौल अचानक चीखों, गोलियों और मातम में बदल गया। आतंकवादियों ने मासूम नागरिकों को निशाना बनाया, उनकी धार्मिक पहचान पूछी और फिर बेरहमी से मौत के घाट उतार दिया। यह एक नरसंहार था, जिसने न केवल कश्मीर की वादियों को शोक की चादर में लपेट दिया, बल्कि 'सामान्य स्थिति' के उस खोखले दावे की भी पोल खोल दी, जिसे सरकार और मीडिया पिछले कई सालों से लगातार प्रचारित कर रहे थे।

पहलगाम हमला एक ऐसी त्रासदी है, जिसने कश्मीर में व्याप्त असुरक्षा, भय और अनिश्चितता को उजागर कर दिया है। यह हमला सिर्फ कुछ आतंकवादियों द्वारा की गई हिंसा का परिणाम नहीं है, बल्कि यह सरकारी तंत्र की विफलता, सुरक्षा में चूक और कश्मीर की जमीनी हकीकत से आंखें मूंद लेने का नतीजा है।

पिछले कुछ सालों में सरकार और मीडिया ने मिलकर कश्मीर में 'सामान्य स्थिति' बहाल होने का एक झूठा नैरेटिव तैयार किया है। पर्यटकों की बढ़ती संख्या, विकास परियोजनाओं की शुरुआत और शांतिपूर्ण माहौल की तस्वीरें दिखाकर यह दावा किया गया कि कश्मीर में अब सब ठीक है। लेकिन पहलगाम हमला इस झूठे नैरेटिव पर एक करारा तमाचा है।

यह हमला यह सिद्ध करता है कि कश्मीर में आतंकवाद अभी भी मौजूद है, अलगाववादी भावनाएं अभी भी सुलग रही हैं और आम नागरिक सुरक्षित नहीं हैं। 'सामान्य स्थिति' का दावा सिर्फ एक मृगतृष्णा है, जो वास्तविकता से कोसों दूर है।

प्रसिद्ध पत्रकार अनुराधा भसीन के अनुसार, 'कश्मीर में सामान्य स्थिति महज एक मृगतृष्णा साबित हुई है। कश्मीरी लोग पर्यटकों, तीर्थयात्रियों और आम नागरिकों पर हमलों का समर्थन नहीं करते। पहलगाम की घटना एक नरसंहार है। ऐसे कृत्य न केवल मानवता के खिलाफ हैं, बल्कि क्षेत्र की अर्थव्यवस्था पर भी गहरा असर डालते हैं।'

पूर्व सैन्य अधिकारी प्रवीण साहनी का भी मानना है कि कश्मीर में सामान्य स्थिति का दावा गलत है। उन्होंने कहा, 'यह गलत है। वास्तविकता यह है कि कश्मीर एक युद्धक्षेत्र है।' उन्होंने यह भी कहा कि सुरक्षा बलों की भारी तैनाती, नागरिकों पर प्रतिबंध और गैर-कश्मीरियों को डोमिसाइल प्रमाणपत्र जारी करने से जनसंख्या संतुलन बदलने का खतरा है।

पहलगाम हमला सुरक्षा में एक बड़ी चूक का परिणाम है। यह सवाल उठना लाज़मी है कि इतने संवेदनशील इलाके में, जहां पर्यटकों की भारी भीड़ मौजूद थी, सुरक्षा के पर्याप्त इंतजाम क्यों नहीं किए गए थे? आतंकवादियों को बिना किसी रोक-टोक के हमला करने और भागने का मौका कैसे मिल गया?

यह किसकी जिम्मेदारी थी कि पर्यटकों की सुरक्षा सुनिश्चित की जाए? क्या खुफिया एजेंसियों ने खतरे की जानकारी दी थी? अगर दी थी, तो उस पर कार्रवाई क्यों नहीं की गई?

श्रीनगर की अधिवक्ता अर्शी जुहर ने सरकार से जवाबदेही की मांग करते हुए कहा, 'सबसे पहले जवाबदेही सरकार की बनती है। कोई आगे आकर यह नहीं कह रहा कि सुरक्षा में चूक हुई है या हमने हालात को हल्के में लिया। गृहमंत्री अमित शाह और उपराज्यपाल मनोज सिन्हा को जिम्मेदारी लेनी चाहिए।'

सुरक्षा में चूक सिर्फ एक लापरवाही का मामला नहीं है, बल्कि यह सरकारी तंत्र की विफलता और कश्मीर की जमीनी हकीकत से आंखें मूंद लेने का नतीजा है।

कश्मीर में सरकारी तंत्र भ्रष्टाचार, लालफीताशाही और जवाबदेही की कमी से ग्रस्त है। सरकारी अधिकारी अपनी जिम्मेदारियों को निभाने के बजाय राजनीतिक एजेंडे को पूरा करने में लगे रहते हैं।

यह जवाबदेही की कमी ही है, जिसके कारण पहलगाम जैसे हमलों को अंजाम देना आसान हो जाता है। आतंकवादियों ए-तालिबान पाकिस्तान ने खुद पाकिस्तान के अंदर धमाके करने शुरू कर दिए, बलूच लड़ाकों ने सेना को सबके सामने बेइज़्ज़त किया, और सरहदों पर जंग छिड़ गई। क्या ये किसी बुरे सपने से कम था?

रावलपिंडी के जनरलों की गलतियाँ बार-बार सामने आ रही हैं। वो शायद ये सोचते हैं कि भारत में दहशत फैलाकर वो बाज़ी पलट सकते हैं, पर उन्हें ये नहीं पता कि उनकी ये सोच कितनी खोखली है। वो शायद ये भी मानते हैं कि भारत में वक्फ बोर्ड जैसे मामलों पर जो तकरार चल रही है, या फिर अनुच्छेद 370 को लेकर जो गुस्सा है, वो उन्हें मौका देगा कि वो शांत पानी में भी हलचल मचा सकें। पर वो ये भूल जाते हैं कि भारत अब जाग चुका है, और वो उनकी हर चाल को नाकाम करने के लिए तैयार है।

पर भारत की बदली हुई सोच ने उनके सारे मंसूबों पर पानी फेर दिया। सर्जिकल स्ट्राइक और बालाकोट एयरस्ट्राइक ने बता दिया कि भारत अब डरने वाला नहीं है, अब झुकने वाला नहीं है। अब भारत सिर्फ विरोध नहीं करता, अब वो वार करता है, वो भी ऐसा कि दुश्मन सात पीढ़ी तक याद रखे।

पहलगाम हमला एक चेतावनी है, एक कड़वी हकीकत है कि सुरक्षा में अब भी कुछ कमियाँ हैं। हमें अपने तौर-तरीकों पर फिर से विचार करना होगा। राष्ट्रीय राइफल्स जैसी अनुभवी टुकड़ियों को और ताक़त देनी होगी, क्योंकि वो उस इलाके को अच्छी तरह से जानती हैं, वहाँ के लोगों को समझती हैं। हमें अपने पुराने 'जासूसों' को फिर से ज़िंदा करना होगा, क्योंकि वही ज़मीन पर होने वाली हर गतिविधि की खबर ला सकते हैं। हमें ये भी देखना होगा कि हमारी खास फ़ोर्स, जम्मू-कश्मीर पुलिस, एनएसजी, और सेना की टुकड़ियाँ आपस में मिलकर कैसे काम करती हैं।

सबसे ज़रूरी है कि हम ये पता करें कि पहलगाम में क्या गलती हुई थी, ताकि हम भविष्य में ऐसे हमलों को रोक सकें। ग़लती करने वाला कितना भी ताक़तवर हो, उसे सज़ा मिलनी ही चाहिए, ताकि कोई दूसरा ऐसी हिमाकत करने की सोचे भी ना।

अच्छी बात ये है कि इस बार पहलगाम हमले के बाद पाकिस्तान को दुनिया में कोई दोस्त नहीं मिला। वक्फ बोर्ड जैसे मुद्दों पर हमारे देश में भले ही थोड़ी बहस हुई हो, लेकिन कहीं से भी कोई बड़ी प्रतिक्रिया नहीं आई, ना ही मुस्लिम देशों ने हमारा विरोध किया।

ये भी एक सच्चाई है कि आज किसी को ये भी याद नहीं कि पाकिस्तान का राजदूत भारत में कौन है। एक वक़्त था जब दिल्ली में उनके दफ़्तर की बड़ी चर्चा होती थी, मीडिया में उनकी खूब वाह-वाही होती थी। पर अब हालात बदल गए हैं। अब अगर पाकिस्तान दोस्ती का हाथ भी बढ़ाता है, या क्रिकेट खेलने का प्रस्ताव भी देता

को स्थानीय अधिकारियों और पुलिस की मिलीभगत से ही मदद मिलती है।

सरकार को इसके खिलाफ सख्त कार्रवाई करनी चाहिए और सरकारी अधिकारियों को जवाबदेह बनाना चाहिए। पारदर्शिता और जवाबदेही के बिना, कश्मीर में शांति और विकास की उम्मीद करना बेमानी है।

अगस्त 2019 में अनुच्छेद 370 को हटाने के बाद कश्मीर में राजनीतिक अस्थिरता और अनिश्चितता और बढ़ गई है। सरकार ने दावा किया था कि इस फैसले से कश्मीर में विकास और शांति आएगी, लेकिन वास्तविकता इसके विपरीत है।

अनुच्छेद 370 को हटाने के बाद कश्मीर में लोकतांत्रिक प्रक्रियाएं कमजोर हो गई हैं, राजनीतिक कार्यकर्ताओं को जेल में डाल दिया गया है और आम नागरिकों पर प्रतिबंध लगा दिए गए हैं। इससे लोगों में सरकार के प्रति गुस्सा और अविश्वास बढ़ गया है।

प्रवीण साहनी का मानना है कि अनुच्छेद 370 हटाने के बाद चीन का प्रभाव कश्मीर में और बढ़ गया है। उन्होंने कहा, 'चीन युद्ध नहीं चाहता, लेकिन अगस्त 2019 से वह पाकिस्तान की संप्रभुता के समर्थन में खड़ा है।' कश्मीर में राजनीतिक अस्थिरता और अनिश्चितता को दूर करने के लिए सरकार को लोकतांत्रिक प्रक्रियाएं बहाल करनी चाहिए, राजनीतिक कार्यकर्ताओं को रिहा करना चाहिए और आम नागरिकों पर लगे प्रतिबंधों को हटाना चाहिए।

पाकिस्तान कश्मीर में आतंकवाद और अलगाववाद को बढ़ावा देने में हमेशा से शामिल रहा है। पहलगाम हमला भी पाकिस्तान की उसी नापाक साजिश का हिस्सा है। पाकिस्तान कश्मीर में आतंकवादियों को प्रशिक्षण, हथियार और वित्तीय सहायता प्रदान करता है। पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी आईएसआई कश्मीर में अलगाववादी भावनाओं को भड़काने और अस्थिरता पैदा करने का प्रयास करती है।

भारत को पाकिस्तान के साथ सख्ती से निपटना चाहिए और उसे आतंकवाद का समर्थन बंद करने के लिए मजबूर करना चाहिए। भारत को अंतरराष्ट्रीय मंच पर पाकिस्तान को बेनकाब करना चाहिए और उस पर दबाव बनाना चाहिए कि वह कश्मीर में दखल देना बंद करे। चीन का प्रभाव कश्मीर में लगातार बढ़ रहा है। चीन पाकिस्तान का एक करीबी सहयोगी है और वह कश्मीर मुद्दे पर पाकिस्तान का समर्थन करता है।

चीन कश्मीर में अरबों डॉलर का निवेश कर रहा है और चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा (सीपीईसी) के माध्यम से पाकिस्तान के साथ संपर्क बढ़ा रहा है। चीन का बढ़ता प्रभाव भारत के लिए एक नया खतरा है, क्योंकि इससे पाकिस्तान को और अधिक समर्थन और आत्मविश्वास मिलेगा।

भारत को चीन के साथ अपनी सीमाओं की सुरक्षा मजबूत करनी चाहिए और चीन को कश्मीर में दखल देने से रोकना चाहिए। पहलगाम हमला भारत के लिए एक वेक-अप कॉल है। यह हमला हमें बताता है कि कश्मीर में 'सामान्य स्थिति' का दावा झूठा है और सुरक्षा, शासन और राजनीतिक स्थिरता के क्षेत्र में कई चुनौतियां मौजूद हैं।

भारत को कश्मीर में आतंकवाद और अलगाववाद को खत्म करने के लिए एक व्यापक और बहुआयामी रणनीति अपनाने की आवश्यकता है। इस रणनीति में निम्नलिखित उपाय शामिल होने चाहिए:

- **सुरक्षा:** कश्मीर में सुरक्षा व्यवस्था को मजबूत करना, आतंकवादियों के खिलाफ सख्त कार्रवाई करना और सीमा पार से होने वाली घुसपैठ को रोकना।
- **शासन:** भ्रष्टाचार को खत्म करना, सरकारी अधिकारियों को जवाबदेह बनाना, पारदर्शिता को बढ़ावा देना और आम नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना।
- **राजनीतिक स्थिरता:** लोकतांत्रिक प्रक्रियाएं बहाल करना, राजनीतिक कार्यकर्ताओं को रिहा करना, आम नागरिकों पर लगे प्रतिबंधों को हटाना और सभी हितधारकों के साथ बातचीत शुरू करना।
- **आर्थिक विकास:** कश्मीर में आर्थिक विकास को बढ़ावा देना, रोजगार के अवसर पैदा करना और गरीबी को कम करना।
- **सामाजिक सद्भाव:** विभिन्न समुदायों के बीच सामाजिक सद्भाव और भाईचारे को बढ़ावा देना, युवाओं को कट्टरपंथी विचारधाराओं से दूर रखना और शिक्षा और जागरूकता के माध्यम से सकारात्मक बदलाव लाना।
- **अंतर्राष्ट्रीय कूटनीति:** पाकिस्तान पर आतंकवाद का समर्थन बंद करने के लिए दबाव बनाना, चीन को कश्मीर में दखल देने से रोकना और अंतर्राष्ट्रीय समुदाय का समर्थन हासिल करना।

पहलगाम हमले के बाद अब यह ज़रूरी है कि भारत सरकार सच्चाई का सामना करे, अपनी गलतियों से सीखे और कश्मीर में स्थायी शांति और स्थिरता लाने के लिए एक नई शुरुआत करे।

क्या पानी बनेगा जंग का मैदान ?

संदीप कुमार

पहलगाम के रक्त-रंजित मैदानों ने दिल्ली को झकझोर दिया, और भारत ने दशकों पुरानी सिंधु जल संधि को निलंबित कर दिया। क्या पानी अब जंग का नया मैदान बनेगा? यह कदम पाकिस्तान को गहरा जल संकट दे सकता है, लेकिन कश्मीर भी इसकी आंच से नहीं बचेगा। एक तरफ बदला है, दूसरी तरफ अनिश्चित भविष्य - क्या भारत का फैसला सही है? इस लेख में हम हर पहलू पर गौर करेंगे।

पहलगाम में लहू बहा, और दिल्ली में सियासी हलचल तेज हो गई। भारत ने सिंधु जल संधि को निलंबित कर दिया - वो समझौता जो दशकों से, युद्धों और आतंकी हमलों के बावजूद, भारत और पाकिस्तान को बांधे हुए था। यह फैसला सिर्फ एक रणनीतिक कदम नहीं, बल्कि पाकिस्तान की तरफ से किए गए हर जख्म का बदला था। लेकिन क्या भारत का यह कदम सही है? और इसका असर पाकिस्तान के साथ-साथ कश्मीर पर क्या होगा?

पाकिस्तान ने भारत की इस कार्रवाई को सीधे तौर पर 'एक्ट ऑफ

वार' के रूप में देखने की धमकी दी है और यह भी कहा है कि वह जवाबी कदम के रूप में शिमला समझौते सहित भारत के साथ सभी द्विपक्षीय संधियों को रद्द कर सकता है। वहीं, पाकिस्तान पीपुल्स पार्टी के नेता और पूर्व विदेश मंत्री बिलावल भुट्टो ने एक उग्र जनसभा को संबोधित करते हुए कहा कि अगर भारत ने सिंधु नदी का पानी रोका, तो सिंधु के पानी में भारतीयों का खून बहने लगेगा। इस तरह के धमकी भरे बयान ने दोनों देशों के बीच बढ़ते तनाव को और भी विकराल बना दिया है, जिससे जंग की स्थिति और भी खतरनाक रूप ले सकती है।

1960 में बनी यह संधि भारत और पाकिस्तान के बीच पानी के बंटवारे को लेकर हुई थी। इसके तहत भारत को पूर्वी नदियों - ब्यास, रावी और सतलज - पर पूरा अधिकार मिला, जबकि पाकिस्तान को पश्चिमी नदियों - सिंधु, झेलम और चिनाब - का पानी मिला। संधि में विवादों को सुलझाने के लिए स्थायी सिंधु आयोग, न्यूट्रल एक्सपर्ट और मध्यस्थता पंचाट जैसे उपाय भी दिए गए थे।

लेकिन क्या 1960 में बैठकर तय किया गया यह समझौता आज भी प्रासंगिक है? क्या पाकिस्तान ने कभी इस संधि का सम्मान किया? जवाब शायद 'नहीं' में है।

पहलगाम हमले के बाद भारत ने सिंधु जल संधि को निलंबित करके पाकिस्तान पर दबाव बनाने की कोशिश की है। भारत का लक्ष्य है कि पाकिस्तान आतंकवाद का समर्थन बंद करे, और कश्मीर में दखल देना बंद करे।

सिंधु नदी पाकिस्तान की जीवन रेखा है। इसकी कृषि, ऊर्जा और शहरी जल आपूर्ति पूरी तरह से इस नदी पर निर्भर है।

इस फैसले के बाद भारत अब पाकिस्तान को सिंधु नदी के पानी से जुड़ी जानकारी देने के लिए बाध्य नहीं होगा, पश्चिमी नदियों पर बांध और जलाशय बना सकता है, और जलविद्युत परियोजनाओं पर पाकिस्तानी अधिकारियों की यात्राओं को रोक सकता है।

लेकिन क्या भारत के पास इतना बुनियादी ढांचा है कि वह पाकिस्तान का पानी रोक सके? फिलहाल जवाब है 'नहीं'। हालांकि, भारत कई जल परियोजनाएं शुरू कर चुका है - जैसे शाहपुरकंडी डैम, उझ डैम - जिनसे भविष्य में वह पाकिस्तान को जाने वाले पानी को कम कर सकता है।

सिंधु नदी पाकिस्तान की जीवन रेखा है। इसकी कृषि, ऊर्जा और शहरी जल आपूर्ति पूरी तरह से इस नदी पर निर्भर है। अगर भारत पाकिस्तान को पानी रोकता है, तो वहां भयानक जल संकट आ

सकता है, जिससे कृषि उत्पादन में गिरावट, ऊर्जा संकट और सामाजिक अशांति फैल सकती है।

पाकिस्तान के नेता इसे 'जल युद्ध' की संज्ञा दे रहे हैं और इसे युद्ध की कार्यवाही के रूप में देख रहे हैं। पूर्व विदेश मंत्री बिलावल भुट्टो ने तो यहां तक कह दिया कि अगर भारत पानी रोकेगा, तो सिंधु में भारतीयों का खून बहेगा। क्या यह सिर्फ एक भड़काऊ बयान है, या पाकिस्तान सच में जंग के लिए तैयार है?

सिंधु जल संधि का निलंबन कश्मीर के लिए भी चिंता का विषय है। एक तरफ, कश्मीरी पंडितों के नरसंहार के बाद कश्मीरी लोगों के मन में बदले और गुस्से की भावना है और भारत को हर तरीके से आतंकवाद को खत्म करने के लिए साथ देना चाहते हैं। तो दूसरी तरफ, अगर पाकिस्तान पर आर्थिक दबाव बढ़ाने के लिए पानी को हथियार बनाया जाता है, तो इसका असर कश्मीर पर भी पड़ेगा, क्योंकि पश्चिमी नदियों का उद्‌गम कश्मीर से ही होता है।

सिंधु जल संधि को निलंबित करना एक जटिल मुद्दा है, जिसके कई पहलू हैं। एक तरफ, यह पाकिस्तान पर दबाव बनाने का एक कारगर तरीका हो सकता है, लेकिन दूसरी तरफ, इससे क्षेत्रीय अस्थिरता बढ़ सकती है और कश्मीरी लोगों को भी नुकसान हो सकता है।

कुछ विशेषज्ञ मानते हैं कि भारत को सिंधु जल संधि को पूरी तरह से रद्द नहीं करना चाहिए, बल्कि पाकिस्तान के साथ बातचीत करके संधि में संशोधन करना चाहिए। इससे भारत को अपने हितों की रक्षा करने और पाकिस्तान को आतंकवाद का समर्थन बंद करने के लिए मजबूर करने में मदद मिलेगी।

भारत का दृष्टिकोण आतंकवाद के खिलाफ जीरो टॉलरेंस की नीति पर आधारित है। पहलगाम हमले के बाद भारत ने पाकिस्तान को यह स्पष्ट संदेश दिया है कि वह आतंकवाद को बर्दाश्त नहीं करेगा, और इसके लिए हर संभव कदम उठाएगा, चाहे वह कूटनीतिक हो, आर्थिक हो, या सैन्य हो।

भारत को अपने हितों की रक्षा करने के लिए दृढ़ रहना चाहिए, लेकिन उसे यह भी ध्यान रखना चाहिए कि उसके फैसले का असर कश्मीरी लोगों और क्षेत्रीय स्थिरता पर न पड़े।

सिंधु जल संधि का निलंबन भारत और पाकिस्तान के बीच एक नए अध्याय की शुरुआत है। अब यह दोनों देशों पर निर्भर करता है कि वे इस स्थिति को कैसे संभालते हैं। अगर वे शांति और सहयोग का रास्ता चुनते हैं, तो वे इस संकट से उबर सकते हैं। लेकिन अगर वे टकराव का रास्ता चुनते हैं, तो उन्हें इसके गंभीर परिणाम भुगतने होंगे।

कश्मीर में शांति और स्थिरता लाने के लिए, भारत को पाकिस्तान के साथ सार्थक बातचीत करनी चाहिए, कश्मीरी लोगों के राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक अधिकारों की रक्षा करनी चाहिए, और आतंकवाद के खिलाफ सख्त कार्रवाई करनी चाहिए। तभी कश्मीर में अमन और चैन का सपना सच हो पाएगा।

ये सिर्फ पानी का बंटवारा नहीं है, ये दो देशों के भविष्य और एक घाटी के दर्द का सवाल है।

अब आगे क्या ?

पहलगाम में हुए बर्बर आतंकी हमले ने भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा रणनीति को फिर से सक्रिय कर दिया है। पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवाद अभी भी भारतीय हितों को चुनौती देने के लिए तत्पर है, यह स्पष्ट है। अब प्रश्न यह है कि भारत इस बार किस प्रकार प्रत्युत्तर देगा? क्या यह प्रतिक्रिया कूटनीतिक दबाव तक सीमित रहेगी या इसमें निर्णायक सैन्य कार्रवाई शामिल होगी? और इस जटिल परिदृश्य में राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोवाल की भूमिका किस प्रकार आकार लेगी?

कुमार संदीप

भारत की प्रतिक्रिया बहुआयामी होने की संभावना है, जिसमें कूटनीतिक और सैन्य दोनों विकल्प शामिल हैं। एक ओर, पाकिस्तान को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अलग-थलग करने और उसकी छवि धूमिल करने के प्रयास तेज किए जाएंगे। दूसरी ओर, सीमित और लक्षित सैन्य कार्रवाई के जरिए पाकिस्तान को यह स्पष्ट संदेश दिया जाएगा कि भारत अब किसी भी हमले को बर्दाश्त नहीं करेगा।

अजीत डोवाल के नेतृत्व में, भारत की कूटनीतिक रणनीति 'बयानबाजी' तक सीमित नहीं रहेगी, बल्कि इसे पाकिस्तान पर दबाव बनाने के एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया जाएगा। इस रणनीति के केंद्र में निम्नलिखित बिंदु होंगेः अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर पाकिस्तान को अलग-थलग करनाः एफएटीएफ (वित्तीय कार्रवाई कार्यदल) के समक्ष पाकिस्तान को 'ब्लैकलिस्ट' कराने के प्रयास तेज किए जाएंगे। संयुक्त राष्ट्र में लश्कर-ए-तैयबा और जैश-ए-मोहम्मद जैसे आतंकवादी संगठनों से सीधे जुड़े व्यक्तियों और संस्थाओं के खिलाफ प्रतिबंधों को बढ़ाने के प्रस्तावों को बढ़ावा दिया जाएगा। जी20, एससीओ और ब्रिक्स जैसे बहुपक्षीय मंचों पर पाकिस्तान को आतंकवाद प्रायोजक देश घोषित करने के लिए वैश्विक सहमति बनाने का प्रयास किया जाएगा। प्रमुख देशों के साथ गहन वार्ताः अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी और अन्य प्रमुख देशों के साथ घनिष्ठ वार्ताएं आयोजित की जाएंगी ताकि पाकिस्तान को सैन्य सहायता या वित्तीय रियायतें देने के किसी भी प्रयास को रोका जा सके। क्षेत्रीय संबंधों का उपयोगः अरब देशों के साथ द्विपक्षीय संबंधों का उपयोग करके पाकिस्तान के पारंपरिक समर्थन आधार को कमजोर किया जाएगा।

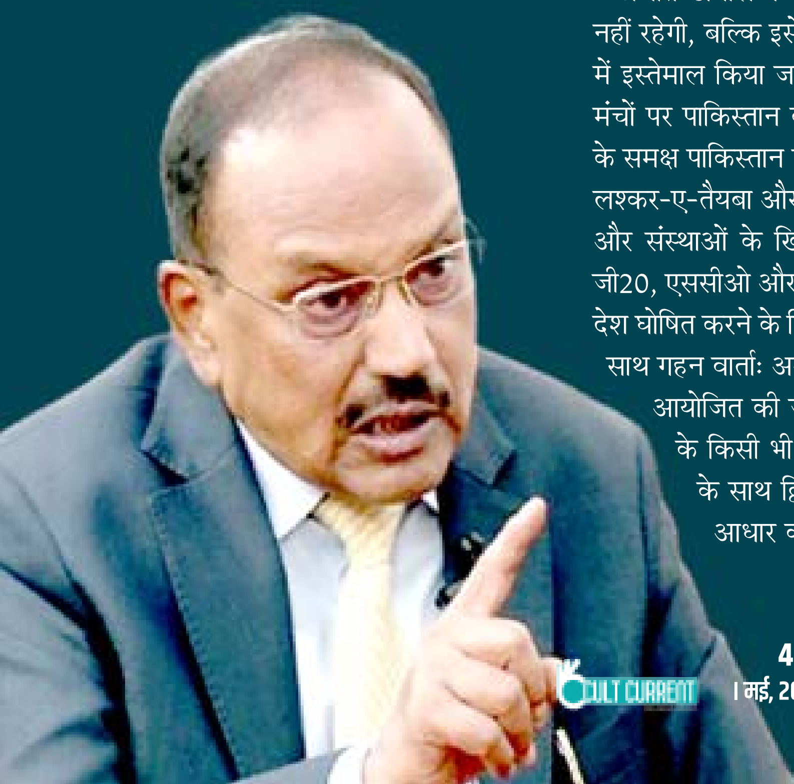

डोवाल का कूटनीतिक दृष्टिकोण 'नाम दो, सबूत दो, और दुनिया को बताओ' के सिद्धांत पर आधारित है। यह रणनीति अंतरराष्ट्रीय आर्थिक प्रतिबंधों और राजनीतिक अलगाव को हथियार बनाकर पाकिस्तान पर निरंतर दबाव बनाए रखने का लक्ष्य रखती है।

हालांकि कूटनीतिक प्रयास जारी रहेंगे, भारत सैन्य स्तर पर चुप नहीं बैठेगा। अतीत के अनुभवों (2016 सर्जिकल स्ट्राइक, 2019 बालाकोट एयरस्ट्राइक) के आधार पर, पहलगाम हमले के जवाब में भारत के पास कई विकल्प खुले हैंः सर्जिकल स्ट्राइक 2.0ः एलओसी पार कर पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में सक्रिय आतंकवादी लॉन्च पैड्स और प्रशिक्षण शिविरों पर लक्षित हमले। स्टैंड-ऑफ स्ट्राइकः भारतीय वायुसेना द्वारा सीमा पार से सीमित हवाई हमले, विशेष रूप से आतंकवादी शिविरों और लॉन्चिंग साइट्स पर। स्पेशल फोर्सेज मिशनः कमांडो आधारित गुप्त अभियान, जिनमें गहरी पैठ बनाकर आतंकवादी नेटवर्क को नष्ट किया जाए। ड्रोन स्ट्राइकः सीमावर्ती इलाकों में पाकिस्तान द्वारा स्थापित आतंकवादी लॉजिस्टिक्स को ड्रोन द्वारा निशाना बनाना, जिससे सीधा संघर्ष टाला जा सके, पर प्रभावी संदेश भेजा जा सके। एलओसी पर बढ़ा हुआ दबावः सीमाओं पर सैन्य दबाव बढ़ाना, लगातार फायरिंग और घुसपैठ रोधी अभियानों को तेज करना, जिससे पाकिस्तानी सेना को आतंकवादी गतिविधियों के समर्थन की कीमत चुकानी पड़े।

इन सैन्य विकल्पों में से प्रत्येक के अपने जोखिम और लाभ हैं। भारत एक सावधानीपूर्वक संतुलित दृष्टिकोण अपनाएगा, जो जवाबी कार्रवाई को सटीक, लक्षित और सीमित रखने के साथ-साथ पाकिस्तान को स्पष्ट संदेश देगा कि किसी भी भविष्य के हमले को बर्दाश्त नहीं किया जाएगा।

अजीत डोवाल, जिन्हें भारत के सबसे प्रभावशाली सुरक्षा रणनीतिकारों में गिना जाता है, इस पूरे परिदृश्य के केंद्र में हैं। उनकी भूमिका कई स्तरों पर अहम होगीः खुफिया समन्वयः डोवाल सुनिश्चित करेंगे कि रॉ, इंटेलिजेंस ब्यूरो, मिलिट्री इंटेलिजेंस और अन्य एजेंसियों से आने वाली सूचनाओं का तेजी से समन्वय किया जाए। उनकी शैली 'एक्शनेबल इंटेलिजेंस' पर तत्काल कदम उठाने की है, न कि केवल रिपोर्ट तैयार करने की। प्रधानमंत्री को मार्गदर्शनः डोवाल प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के सबसे करीबी सुरक्षा सलाहकार हैं। वे संभावित सैन्य विकल्पों (सर्जिकल स्ट्राइक, एयर स्ट्राइक या ड्रोन ऑपरेशन) के जोखिम और लाभ का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करेंगे, और प्रधानमंत्री को स्थिति के अनुसार सर्वश्रेष्ठ निर्णय लेने के लिए मार्गदर्शन देंगे। साइबर प्रतिरोधः डोवाल के तहत भारत साइबर मोर्चे पर भी पाकिस्तान के आतंकवादी नेटवर्क और फेक न्यूज़ फैक्ट्रियों को निशाना बनाने के लिए साइबर ऑपरेशन शुरू कर सकता है। कश्मीर में संकट प्रबंधनः कश्मीर घाटी में संभावित आंतरिक उथल-पुथल के लिए डोवाल राज्य पुलिस, अर्धसैनिक बलों और खुफिया एजेंसियों के बीच बेहतर तालमेल स्थापित कर संकट प्रबंधन करेंगे। नागरिकों के बीच विश्वास बनाए रखने के लिए 'Winning Hearts and Minds' कार्यक्रमों को फिर सक्रिय किया जाएगा। अंतर्राष्ट्रीय कथा का निर्माणः डोवाल के निर्देश पर भारतीय मिशनों और प्रवक्ताओं को एक सुसंगत कथा देने का काम होगा कि भारत एक पीड़ित राष्ट्र है, और पाकिस्तान एक आक्रामक आतंक-प्रेरित राज्य। यह कथा अंतर्राष्ट्रीय मीडिया और राजनीतिक मंचों पर भारत के लिए सहानुभूति और समर्थन जुटाएगी।

पहलगाम हमले ने भारत को एक निर्णायक मोड़ पर ला खड़ा किया है। 'सब्र' की रणनीति की अब सीमाएँ दिखने लगी हैं। डोवाल के मार्गदर्शन में भारत एक ऐसी रणनीति अपनाएगा जो संतुलित होगी, जिसमें कूटनीतिक दबाव और सीमित सैन्य कार्रवाई का मिश्रण होगा।

डोवाल की कार्यशैली के अनुसार, प्रतिक्रिया ऐसी होगी — 'कम शब्द, ज्यादा एक्शन।'

इस बार भारत की कार्रवाई तीखी, सटीक और चौंकाने वाली होगी। पाकिस्तान को यह स्पष्ट संदेश दिया जाएगा कि भारत अब किसी भी हमले की कीमत वसूलेगा।

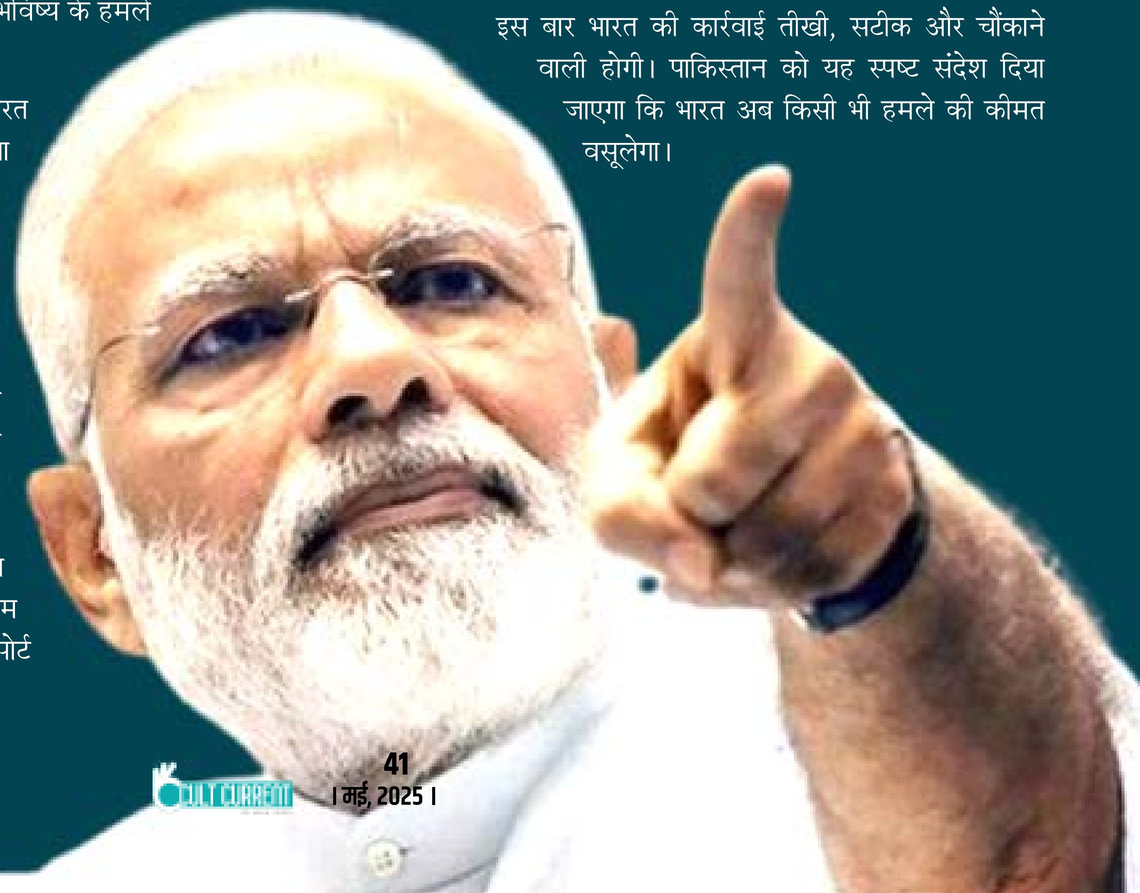

सही समय है पाकिस्तान को सज़ा देने का

एयर मार्शल अनिल चोपड़ा (सेवानिवृत्त)

भारत के जम्मू और कश्मीर केंद्र शासित प्रदेश में पहलगाम के पास निर्दोष पर्यटकों के साथ हुई क्रूर नरसंहार की घटना की अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप और रूस के राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन सहित सभी प्रमुख विश्व नेताओं ने कड़ी निंदा की है।

इस हमले में कम से कम 28 लोग मारे गए और कई अन्य घायल हो गए। अमेरिकी उपराष्ट्रपति जे.डी. वेंस के भारत में होने के दौरान यह घटना हमलावरों और उनके समर्थकों के दुस्साहस को दर्शाती है। सऊदी अरब की यात्रा पर गए भारतीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को अपना दौरा बीच में ही छोड़ कर वापस लौटना पड़ा। भारतीय सुरक्षा प्रतिष्ठान तुरंत हरकत में आ गया। गृह मंत्री अमित शाह और सेना प्रमुख जमीनी स्थिति का जायजा लेने के लिए पहलगाम पहुंचे।

आतंकवादियों की पहचान हो चुकी है और उनके पाकिस्तान से संबंध स्थापित हो गए हैं। तीनों सेना प्रमुख अब एक प्रतिक्रिया पर चर्चा कर रहे हैं और सभी विकल्पों पर विचार कर रहे हैं। इसे यूं ही नहीं जाने दिया जाएगा। पूरे देश में गुस्सा है। इसके परिणाम होंगे। राष्ट्रीय जांच एजेंसी (एनआईए) के अधिकारियों की एक टीम मौके पर जांच कर रही है। बांग्लादेश में हाल की घटनाएं, पश्चिम बंगाल में घुसपैठ और दंगे और हिंदुओं पर पाकिस्तानी सेना प्रमुख का जहरीला रुख एक बड़ी साजिश का संकेत देते हैं।

पाकिस्तानी सेना प्रमुख की सर्वोच्चतावादी बातें

इस्लामाबाद में प्रवासी पाकिस्तानियों के सम्मेलन को संबोधित करते हुए, जनरल असीम मुनीर ने पाकिस्तान के संस्थापक मुहम्मद अली जिन्ना के शब्दों को दोहराया, जो यह मानते थे कि हिंदू और मुसलमान अलग-अलग दर्शन, रीति-रिवाजों और कानूनों का पालन करते हैं, जिससे राष्ट्रीय एकता असंभव हो जाती है। मुनीर पाकिस्तान की वैचारिक नींव की जड़ों में लौट आए। उन्होंने कहा, 'हमारा धर्म अलग है, हमारे रीति-रिवाज अलग हैं, हमारी परंपराएं अलग हैं, हमारे विचार अलग हैं, हमारी महत्वाकांक्षाएं अलग हैं - वहीं से दो राष्ट्र सिद्धांत की नींव रखी गई थी। हम दो राष्ट्र हैं, हम एक राष्ट्र नहीं हैं।'

उन्होंने प्रवासी पाकिस्तानियों से आग्रह किया कि वे कभी न भूलें कि वे 'एक श्रेष्ठ विचारधारा और संस्कृति' से संबंधित हैं, और इस विचारधारा को भविष्य की पीढ़ियों तक पहुंचाएं। उन्होंने कहा,

'आपको अपने बच्चों को पाकिस्तान की कहानी बतानी होगी ताकि वे इसे न भूलें।'

पहलगाम हमले में पाकिस्तानी पदचिह्न

हमले के तरीके से हिंदू घृणा स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही है। पाकिस्तानी सेना के समर्थन के संकेत मिल रहे हैं। पाकिस्तान कश्मीर में उभर रही शांति और समृद्धि को बर्दाश्त नहीं कर सकता। 2019 में इसकी विशेष स्वायत्तता की स्थिति रद्द होने के बाद से राज्य में कोई घटना नहीं हुई है। पर्यटकों की संख्या बढ़ रही है। चुनावों में जनता की भागीदारी बहुत महत्वपूर्ण रही है। मुख्यमंत्री उमर अब्दुल्ला जनता की बेहतरी के लिए नई दिल्ली सरकार के साथ मिलकर काम कर रहे हैं।

लेकिन कश्मीर का भारत में विलय पाकिस्तानी शासक वर्ग को रास नहीं आया। पाकिस्तान एक वैचारिक राज्य है, और उसकी सेना ने उस विचारधारा के संरक्षक का जिम्मा उठाया है। मुनीर ने कहा कि भारत की 1.3 मिलियन मजबूत सेना पाकिस्तान को डरा नहीं सकती। वह स्पष्ट रूप से 93,000 पाकिस्तानी सैनिकों के उस दयनीय आत्मसमर्पण के बारे में भूल जाते हैं जिसने दो सप्ताह तक चले 1971 के भारत-पाकिस्तान युद्ध को समाप्त कर दिया था।

वरिष्ठ पत्रकार आदित्य राज कौल, एक हिंदू कश्मीरी ने ट्वीट किया, 'चीन ने पहलगाम आतंकवादी हमले की निंदा की और कहा कि वे आतंकवाद का हर रूप में विरोध करते हैं। उम्मीद है कि चीन तब अपने 'आयरन ब्रदर' पाकिस्तान से यह पूछने का साहस कर पाएगा कि वह असीम मुनीर के निर्देशों पर आतंकवाद को प्रायोजित क्यों करता रहता है। यह स्पष्ट होना चाहिए। पहलगाम आतंकवादी हमले का मास्टरमाइंड हाफिज सईद या लश्कर-ए-तैयबा नहीं है। पहलगाम नरसंहार का मास्टरमाइंड रावलपिंडी में बैठा पाकिस्तानी सेना का असीम मुनीर है। पाकिस्तानी सेना और आईएसआई को कश्मीर में खूनी नरसंहार की कीमत चुकानी होगी। मोदी सरकार को साहसपूर्वक कार्रवाई करनी चाहिए।'

राजनीतिक और राजनयिक प्रतिक्रिया

भारतीय जनता क्रोधित है और मांग कर रही है कि 'कभी मत भूलो, कभी मत माफ करो' के मंत्र को अमल में लाया जाए।

लंबे समय से, भारत ने नरम रुख अपनाया है। शायद यही कारण है कि कुछ लोगों ने भारत को हल्के में लिया है। यह खुद को एक कमजोर राज्य के रूप में नहीं दिखने दे सकता है। इज़राइल से सीखने के लिए सबक हैं।

राजनयिक, राजनीतिक और सैन्य विकल्प हैं। सभी को एक साथ प्रयोग करने की आवश्यकता है। दुनिया भर की कई सरकारों से समर्थन और एकजुटता की मजबूत अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है, जिन्होंने स्पष्ट रूप से पहलगाम आतंकवादी हमले की निंदा की है। दुनिया भारत के साथ है। कई देशों ने आतंकवाद से पीड़ित हैं। उल्लेखनीय रूप से, सऊदी अरब और संयुक्त अरब अमीरात जैसे प्रमुख इस्लामी देशों ने भारत के पक्ष में बात की है।

हमले पर भारत की तत्काल प्रतिक्रिया व्यापक पहुंच वाली थी। इसने 1960 की सिंधु जल संधि को निलंबित कर दिया है, जिससे पानी का बंटवारा संभव हो सका, जिससे पाकिस्तानी भूमि के विशाल हिस्सों को सिंचाई प्रदान की गई। दोनों देशों के बीच सभी व्यापार, जिसमें तीसरे देशों के माध्यम से भी शामिल है, को निलंबित कर दिया गया है। इंटीग्रेटेड चेक पोस्ट अटारी, एक रणनीतिक सीमा पार व्यापार चौकी और व्यापार के लिए एकमात्र कानूनी भूमि मार्ग, तत्काल प्रभाव से बंद कर दिया गया था। भारत में पाकिस्तानी यूट्यूब और अन्य सोशल मीडिया चैनलों पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। क्रिकेट और अन्य खेल आयोजनों को निलंबित कर दिया गया है। पाकिस्तानी नागरिकों को सार्क वीजा छूट योजना (एसवीईएस) वीजा के तहत भारत की यात्रा करने की अनुमति नहीं दी जाएगी। पाकिस्तानी नागरिकों को पहले से जारी किए गए एसवीईएस वीजा रद्द माने जाएंगे, और किसी भी पाकिस्तानी को वर्तमान में एसवीईएस के तहत भारत में 48 घंटों के भीतर छोड़ने का समय दिया गया है।

नई दिल्ली में पाकिस्तानी उच्चायोग (भारत में पाकिस्तानी राजनयिक मिशन) में सैन्य, नौसेना और वायु सलाहकारों को अवांछित घोषित किया गया है और उन्हें एक सप्ताह के भीतर भारत छोड़ने का समय दिया गया है। भारत इस्लामाबाद में भारतीय उच्चायोग से अपने स्वयं के रक्षा/नौसेना/वायु सलाहकारों को भी वापस लेगा। संबंधित उच्चायोगों में उनके पदों को रद्द कर दिया गया है। उच्चायोगों की समग्र संख्या को 1 मई तक आगे कटौती के माध्यम से वर्तमान 55 से घटाकर 30 कर दिया जाएगा। भारत पाकिस्तान को सबक सिखाने के लिए अपनी वित्तीय और राजनयिक ताकत का इस्तेमाल करेगा।

ऐसे अन्य काम हैं जो किए जा सकते हैं। अप्रत्यक्ष विकल्पों में भारत पाकिस्तान में अलगाववादी ताकतों का समर्थन करना और बलूचिस्तान, सिंध, गिलगित-बाल्टिस्तान और पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर में विद्रोह को अधिक समर्थन देना शामिल है।

सैन्य विकल्प

भारतीय सरकार की मंत्रिमंडल सुरक्षा समिति (सीसीएस) ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के आवास पर अपनी बैठक में समग्र सुरक्षा स्थिति की समीक्षा की और सभी बलों को उच्च सतर्कता बनाए रखने का निर्देश दिया। सशस्त्र बलों ने पहले ही ऑपरेशन टिक्का, एक उच्च स्तरीय आतंकवाद विरोधी अभियान शुरू कर दिया है। कुछ आतंकवादियों को पहले ही मार गिराया गया है। भारतीय सेना भारत और पाकिस्तान नियंत्रित कश्मीर के हिस्सों के बीच नियंत्रण

रेखा (एलओसी) पर बिना किसी उकसावे के की गई गोलीबारी का जबरदस्त जवाब दे रही है। वहां युद्धविराम वास्तव में रद्द कर दिया गया है। भारतीय सशस्त्र बल पहले से ही प्रारंभिक संयुक्त सैन्य अभ्यास कर रहे हैं। सशस्त्र बलों का चयनात्मक जुटाना संभव है और यह एक मजबूत संकेत भेजेगा। यदि ऐसा होता है, तो भारत एक बड़े पैमाने पर बहु-क्षेत्रीय दंडात्मक हमला कर सकता है।

भारत के पास कई अनकहे विकल्प हैं। यह पाकिस्तान के भीतर सैन्य प्रतिष्ठानों पर हमला करने के लिए ऑपरेटरों को सक्रिय कर सकता है। सीमा पार आतंकवादी प्रशिक्षण शिविरों के खिलाफ तोपखाने से हमला किया जा सकता है। खुले युद्ध की स्थिति में, पाकिस्तान में गोला-बारूद बहुत तेजी से खत्म हो जाएगा। आतंकवादी शिविरों के खिलाफ बहुत व्यापक हवाई हमले किए जा सकते हैं। ब्रह्मोस और अन्य क्रूज मिसाइलों का इस्तेमाल किया जा सकता है।

भारतीय नौसेना का विमान वाहक पहले ही अरब सागर में रवाना हो चुका है। कुछ पनडुब्बियां इसका अनुसरण कर सकती हैं या पहले से ही इस क्षेत्र में हो सकती हैं। फ्रांसीसी राफेल लड़ाकू विमान स्कैल्प-ईजी और उल्का मिसाइलों से लैस होने के साथ भारतीय वायु सेना दुर्जेय है। Su-30 MKI, उन्नत मिग 29 और मिराज-2000 भी शक्तिशाली संपत्ति हैं।

नई दिल्ली बलूच लिबरेशन आर्मी और पाकिस्तान में पश्तून विद्रोहियों के साथ कई मोर्चों को खोलने के लिए समन्वय कर सकती है। वृद्धि को वर्गीकृत और सावधानीपूर्वक प्रबंधित किया जाना होगा। पाकिस्तान की सेना की ओर से एक असमान प्रतिक्रिया की उम्मीद की जानी चाहिए और उसके लिए तैयार रहना चाहिए।

भारत पाकिस्तान में आतंकवादियों के खिलाफ साजिश रच रहे आतंकवादी नेताओं की चुनिंदा अमेरिकी और इजरायल शैली की हत्याओं की दिशा में भी काम कर सकता है।

पाकिस्तान के कुछ ही समर्थक हैं। ईरान और सऊदी अब उसके दोस्त नहीं हैं। चीन सबसे अच्छा मध्यस्थ के रूप में काम करेगा। अमेरिका, रूस, इज़राइल और यूरोप नियंत्रित आक्रमण के लिए भारत का समर्थन करेंगे। यहां बड़ा मकसद पाकिस्तानी सेना को खराब रोशनी में दिखाना है। परमाणु धमकी को चुनौती दें।

सजा एक बार की घटना नहीं होनी चाहिए। यह अब से एक सतत कार्यक्रम होना चाहिए। आतंकवाद का समर्थन करने के लिए पाकिस्तान के लिए इसे दर्दनाक बनाएं। अमन की आशा ('शांति की उम्मीद') जैसे संयुक्त मीडिया अभियान समाप्त होने चाहिए। इस बीच, सैन्य क्षमता निर्माण पर अधिक ध्यान देना चाहिए। वायु सेना के लड़ाकू विमान स्क्वाड्रन की संख्या बढ़ाएं। सेना को कम करना बंद करो। और अधिक परमाणु पनडुब्बियां प्राप्त करें। परमाणु हथियार बढ़ाएं।

नई दिल्ली बलूच लिबरेशन आर्मी और पाकिस्तान में पश्तून विद्रोहियों के साथ कई मोर्चों को खोलने के लिए समन्वय कर सकती है। वृद्धि को वर्गीकृत और सावधानीपूर्वक प्रबंधित किया जाना होगा। पाकिस्तान की सेना की ओर से एक असमान प्रतिक्रिया की उम्मीद की जानी चाहिए और उसके लिए तैयार रहना चाहिए।

पाकिस्तान की प्रतिक्रिया

पाकिस्तान ने भी अपनी सेना को अलर्ट पर रखा है। संभावित भारतीय हमले के लिए सीमा क्षेत्रों को उनके द्वारा संवेदनशील बनाया जा रहा है। पाकिस्तान ने 1972 के शिमला समझौते को निलंबित कर दिया है जिसने एलओसी को अस्थायी सीमा के रूप में चिह्नित किया था। इस्लामाबाद ने भारतीय एयरलाइनों के लिए अपने हवाई क्षेत्र को बंद कर दिया है। जनता के मनोबल को बढ़ाने के लिए भारत विरोधी बयानबाजी को बढ़ावा दिया गया है। पाकिस्तान ने यह भी घोषणा की है कि सिंधु जल संधि के तहत उसके कारण पानी के मोड़ को युद्ध के कार्य के रूप में माना जाएगा। यह इंतजार करने और देखने की स्थिति है।

आतंकवादी घुसपैठ को रोकने का समय

कई भारतीय राजनेता हैं, खासकर पश्चिम बंगाल और उत्तर प्रदेश में, जो अवैध बांग्लादेशी और रोहिंग्या प्रवासियों को अपना राजनीतिक समर्थन आधार मानते हैं और उनके आगमन और बसावट पर आंखें मूंद लेते हैं। इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए उचित कार्रवाई करने का समय आ गया है। जब शांति की लंबी अवधि होती है तो सुरक्षा बलों और खुफिया एजेंसियों में कम सतर्क रहने की प्रवृत्ति होती है। कारगिल में ऐसा हुआ था।

कश्मीर एक अलग कहानी है। दशकों आगे तक सतर्कता बरतनी होगी। यदि ये आतंकवादी लगभग एक महीने से इस क्षेत्र के भीतर थे, जैसा कि रिपोर्टों से संकेत मिलता है, तो हमें दर्पण में देखने की जरूरत है। भारतीय न्यायपालिका को अक्सर आतंकवादियों के खिलाफ नरम माना जाता है। इस पर गंभीर समीक्षा की जरूरत है। जनता को आतंकवादियों के खिलाफ और अधिक संवेदनशील बनाना होगा। कार्रवाई करने का समय अब है। एक नरम प्रतिक्रिया आगे और कायरतापूर्ण हमलों को आमंत्रित करेगी।

एयर मार्शल अनिल चोपड़ा (सेवानिवृत्त), भारतीय वायुसेना के अनुभवी लड़ाकू परीक्षण पायलट और नई दिल्ली में सेंटर फॉर एयर पावर स्टडीज के पूर्व महानिदेशक।

डोनाल्ड ट्रम्प बिस्मार्क बनेंगे या नेपोलियन?

जब डोनाल्ड ट्रम्प साल 2025 में एक बार फिर सत्ता में वापस आये तो विश्लेषकों के मन में यह सवाल उठा कि क्या वह विदेश नीति में कोई बड़ा बदलाव करेंगे? क्या वह 'ग्रेट पावर कंपटिशन' की अपनी पूर्ववर्ती रणनीति को जारी रखेंगे? क्या वह सहयोग और समझौते के रास्ते पर चलेंगे? या फिर वह कुछ ऐसा करेंगे जो अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को पूरी तरह से बदल देगा?

मनोजकुमार

अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में 'ग्रेट पावर कंपटिशन' की अवधारणा ने एक दिलचस्प मोड़ ले लिया है। एक समय ऐसा था जब इस अवधारणा को पुरानी और अप्रासंगिक मानकर त्याग दिया गया था, लेकिन डोनाल्ड ट्रम्प के अमेरिका के पहली बार राष्ट्रपति बनने के साथ ही इसने नाटकीय रूप से पुनर्जीवन दिया। 2017 में जारी ट्रम्प की राष्ट्रीय सुरक्षा रणनीति ने इसे प्रमुखता से स्थान दिया, जो दर्शाता है कि अमेरिका अब दुनिया के अन्य देशों

के साथ सहयोग करने की बजाय चीन और रूस जैसे प्रतिद्वंद्वियों का सामना करने पर ध्यान केंद्रित करेगा।

ट्रम्प प्रशासन का मानना था कि चीन और रूस दोनों ही अमेरिकी भू-राजनीतिक लाभ को चुनौती दे रहे हैं और अपने अनुकूल एक अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था स्थापित करने की कोशिश कर रहे हैं। इसलिए, अमेरिका की प्राथमिकता यह सुनिश्चित करना था कि वह इन देशों से आगे रहे। बाद में, ट्रम्प के उत्तराधिकारी, जो बाइडेन ने भी इस रणनीति को जारी रखा, यद्यपि उन्होंने अमेरिकी मूल्यों और लोकतंत्र को बढ़ावा देने पर अधिक बल दिया।

ऐसे में जब डोनाल्ड ट्रम्प साल 2025 में एक बार फिर सत्ता में वापस आते हैं तो विश्लेषकों के मन में यह सवाल उठता है कि क्या वह विदेश नीति में कोई बड़ा बदलाव करेंगे? क्या वह 'ग्रेट पावर कंपटिशन' की अपनी पूर्ववर्ती रणनीति को जारी रखेंगे? क्या वह सहयोग और समझौते के रास्ते पर चलेंगे? या फिर वह कुछ ऐसा करेंगे जो अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को पूरी तरह से बदल देगा?

विश्लेषकों को उम्मीद थी कि 2025 में ट्रम्प के सत्ता में लौटने के बाद उनकी विदेश नीति की रणनीति में निरंतरता बनी रहेगी। लेकिन, ऐसा नहीं हुआ। आश्चर्यजनक रूप से, ट्रम्प ने उस आम सहमति को तोड़ दिया जिसे उन्होंने स्वयं स्थापित किया था। अब, वह चीन और रूस के साथ प्रतिस्पर्धा करने के बजाय सहयोग करना चाहते हैं और उन समझौतों पर विचार करने के इच्छुक हैं जो पहले अमेरिकी हितों के खिलाफ माने जाते थे। ट्रम्प ने यूक्रेन में युद्ध को जल्द से जल्द खत्म करने की इच्छा व्यक्त की है, भले ही इसके लिए यूक्रेन को सार्वजनिक रूप से अपमानित करने और रूस को अपने क्षेत्रों पर कब्जा करने की अनुमति देनी पड़े।

हालांकि, चीन के साथ संबंध अभी भी तनावपूर्ण बने हुए हैं, खासकर टैरिफ को लेकर। फिर भी, ट्रम्प ने चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग के साथ एक व्यापक समझौता करने की इच्छा जताई है। इस बीच, उन्होंने अपने यूरोपीय सहयोगियों और कनाडा पर आर्थिक दबाव बढ़ा दिया है और ग्रीनलैंड और पनामा नहर जैसे क्षेत्रों पर कब्जा करने की धमकी दे रहे हैं। यह भी एक आश्चर्यजनक तथ्य है कि अमेरिका जो की अपने सहयोगी देशों के साथ हमेशा खड़ा रहता था, आज अपने सहयोगियों को ही आर्थिक रूप से नुकसान पहुंचाने पर तुला है।

चीन के साथ संबंध अभी भी तनावपूर्ण बने हुए हैं, खासकर टैरिफ को लेकर। फिर भी, ट्रम्प ने चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग के साथ एक व्यापक समझौता करने की इच्छा जताई है। इस बीच, उन्होंने अपने यूरोपीय सहयोगियों और कनाडा पर आर्थिक दबाव बढ़ा दिया है और ग्रीनलैंड और पनामा नहर जैसे क्षेत्रों पर कब्जा करने की धमकी दे रहे हैं।

कुछ पर्यवेक्षकों ने ट्रम्प की इन हरकतों को 'ग्रेट पावर कंपटिशन' के दायरे में लाने का प्रयास किया है। उनका तर्क है कि रूस के करीब जाना एक कुशल भू-राजनीतिक चाल है, जिसका उद्देश्य चीन और रूस के बीच दरार पैदा करना है। अन्य लोगों का मानना है कि ट्रम्प केवल एक अधिक राष्ट्रवादी किस्म की 'ग्रेट पावर कंपटिशन' को आगे बढ़ा रहे हैं, जो शी, पुतिन और यहां तक कि भारत के नरेंद्र मोदी और हंगरी के विक्टर ऑर्बन जैसे नेताओं को भी समझ में आएगी। हालांकि, यह केवल एक कयास है। हकीकत तो यह है कि ट्रम्प के भविष्य के कदम क्या होंगे यह किसी को भी नहीं पता।

लेकिन सच्चाई यह है कि ट्रम्प का वैश्विक दृष्टिकोण 'ग्रेट पावर कंपटिशन' का नहीं, बल्कि ग्रेट पावर के मिलीभगत का है। वह 19वीं शताब्दी के यूरोप की 'कॉन्सर्ट ऑफ यूरोप' प्रणाली के समान एक ऐसी दुनिया चाहते हैं, जहां शक्तिशाली नेता मिलकर दुनिया पर अपनी इच्छानुसार शासन करें। इस प्रणाली में शक्तिशाली राष्ट्र एक साथ मिलकर काम करते हैं और विश्व व्यवस्था को बनाए रखते हैं। उनका मानना है कि वे सामूहिक रूप से चुनौतियों का समाधान कर सकते हैं और स्थिरता सुनिश्चित कर सकते हैं। ट्रम्प का यह मानना है कि यह उनका कर्तव्य है कि पूरी दुनिया में शांति स्थापित की जाए।

यह दृष्टिकोण, अमेरिकी विदेश नीति के एक मूलभूत बदलाव का प्रतिनिधित्व करता है। जहां एक ओर यह सहयोग और स्थिरता की संभावनाओं को खोलता है, वहीं यह कई खतरे भी पैदा करता है।

इस दृष्टिकोण में कई खतरे छिपे हैं। सबसे पहले, यह धारणा भ्रामक है कि प्रभाव क्षेत्रों को आसानी से परिभाषित और प्रबंधित किया जा सकता है। इतिहास ने दिखाया है कि शक्तिशाली राष्ट्रों के बीच हमेशा तनाव और प्रतिस्पर्धा बनी रहती है, भले ही वे सहयोग करने का दिखावा करें। हर राष्ट्र का अपना हित होता है और राष्ट्रहित से बढ़कर किसी के लिए भी कुछ नहीं होता। ऐसे में जब अलग-अलग पृष्ठभूमि और विचारधारा के शक्तिशाली राष्ट्र साथ आएंगे तो मतभेद होना स्वाभाविक है।

दूसरे, यह लेन-देन संबंधी दृष्टिकोण वैचारिक मतभेदों को कम आंकता है। ट्रम्प को शायद इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि शी जिनपिंग अपने प्रभाव क्षेत्र को कैसे प्रबंधित करते हैं, लेकिन चीन में लोकतंत्र को कुचलने से अमेरिका और अन्य देशों में विरोध हो सकता है। मानवाधिकारों का मुद्दा भी एक बड़ी चिंता है और एक जिम्मेदार

वैश्विक शक्ति के रूप में, अमेरिका को दुनिया भर में मानवाधिकारों को बढ़ावा देने के लिए काम करना चाहिए।

तीसरा, यह दृष्टिकोण छोटे देशों की आवाज को दबा देता है। ट्रम्प को यूक्रेन के भविष्य पर बातचीत में शामिल होने या यूरोपीय सहयोगियों से परामर्श करने में कोई दिलचस्पी नहीं है। उनका मानना है कि शक्तिशाली नेता ही दुनिया का भविष्य तय कर सकते हैं।

चौथा, यह दृष्टिकोण अस्थिरता को जन्म दे सकता है। जब महान शक्तियां मौजूदा व्यवस्था को चुनौती देने वालों को दबाने का प्रयास करती हैं, तो वे अक्सर प्रतिरोध को भड़काती हैं और ऐसे आंदोलनों

को जन्म देती हैं जो उनकी सत्ता को चुनौती दे सकती हैं। इतिहास हमें सिखाता है कि जब शक्तिशाली राष्ट्र छोटे देशों पर अपनी इच्छा थोपते हैं तो इससे अस्थिरता और संघर्ष पैदा होता है।

हालांकि, ट्रम्प का ये दृष्टिकोण सफल हो सकता है अगर दुनिया शांति और स्थिरता की ओर बढ़े तो।

ट्रम्प का मानना है कि वह चीन और रूस के साथ विचारधारा के बजाय व्यापार से संचालित होकर सम्बंध बनाए रखेंगे। पर ऐसा करना सही नहीं है। उनके नेतृत्व में ऐसा आचरण करना दुनिया की सुरक्षा की कीमत पर हो सकता है।

इसलिए अमेरिका को हर देश की बात सुननी चाहिए और उनके साथ भाईचारे का रिश्ता रखना चाहिए ताकि आगे चलकर कोई परेशानी न हो। हर देश को एक समान अधिकार मिलना चाहिए। यही एक सुरक्षित भविष्य का निर्माण कर सकता है।

यह स्पष्ट है कि ट्रम्प की विदेश नीति एक जटिल और बहुआयामी मुद्दा है। उनके दृष्टिकोण में कुछ फायदे और कुछ नुकसान हैं। यह देखना बाकी है कि वह आने वाले वर्षों में दुनिया को कैसे आकार देंगे।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य:

शक्ति संतुलन के इतिहास को देखते हुए, यह समझना महत्वपूर्ण है कि ट्रम्प का 'ग्रेट पावर की मिलीभगत' का विचार कोई नया नहीं है। 19वीं शताब्दी में, यूरोपीय शक्तियों ने 'कॉन्सर्ट ऑफ यूरोप' नामक एक प्रणाली स्थापित की, जिसका उद्देश्य महाद्वीप में शांति और स्थिरता बनाए रखना था। इस प्रणाली में, प्रमुख शक्तियां एक साथ मिलकर काम करती थीं और अपने प्रभाव क्षेत्रों को मान्यता देती थीं।

हालांकि, यह प्रणाली अंततः विफल रही, क्योंकि शक्तियों के बीच प्रतिस्पर्धा और महत्वाकांक्षाएं बढ़ गईं। यह इतिहास ट्रम्प के दृष्टिकोण के संभावित खतरों की चेतावनी देता है। इतिहास से हमें यह सीखने की जरूरत है कि अपने प्रभाव क्षेत्र को बढ़ाने के लिए गलत तरीके इस्तेमाल नहीं करने चाहिए। सभी के साथ समान व्यवहार करना चाहिए।

मध्य शक्तियों की भूमिका:

यह भी ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि मध्य शक्तियों का उदय अंतरराष्ट्रीय राजनीति को जटिल बना रहा है। भारत, ब्राजील और दक्षिण अफ्रीका जैसे देश अब वैश्विक मंच पर अधिक मुखर भूमिका निभा रहे हैं और वे किसी भी ऐसे विश्व व्यवस्था को स्वीकार करने के मूड में नहीं हैं जो उन्हें हाशिए पर डाल दे।

ट्रम्प की 'शक्तियों का मिलीभगत' की रणनीति इन देशों को अलग-थलग कर सकती है और अंतरराष्ट्रीय अस्थिरता को बढ़ा सकती है।

वैश्विक चुनौतियां:

जलवायु परिवर्तन, महामारी और आतंकवाद जैसी वैश्विक चुनौतियों के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता है। ट्रम्प की 'शक्तियों की मिलीभगत' की रणनीति इन चुनौतियों से निपटने के लिए आवश्यक सहयोग को कम कर सकती है।

डोनाल्ड ट्रम्प की विदेश नीति एक जटिल और विवादास्पद विषय है। उनकी 'ग्रेट पावर कंपटिशन' की रणनीति सहयोग और स्थिरता की संभावनाओं को खोलती है, लेकिन इसमें महत्वपूर्ण खतरे भी शामिल हैं।

यह देखना बाकी है कि ट्रम्प आने वाले वर्षों में अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था को कैसे आकार देंगे। लेकिन यह स्पष्ट है कि उनकी नीतियां वैश्विक राजनीति पर गहरा प्रभाव डालेंगी।

ट्रम्प प्रशासन को इतिहास के सबक को ध्यान में रखना चाहिए और छोटे देशों और सहयोगी देशों को एक साथ लेकर चलना चाहिए। तभी दुनिया में शांति और स्थिरता लाई जा सकती है।

ट्रम्प का यह कहना कि 'शक्तिशाली देशों को दुनिया को नियंत्रित करने का अधिकार है' एक खतरनाक विचार है। इससे अराजकता फैल सकती है तथा दुनिया और भी खतरनाक जगह बन सकती है। ऐसे में सभी को साथ लेकर चलना ही समझदारी है।

ट्रम्प को चाहिए कि वो अंतरराष्ट्रीय संबंधों को बेहतर बनाने के लिए काम करें। साथ ही यह भी सुनिश्चित करे कि सभी देशों को सुरक्षा और समृद्धि का लाभ मिले, न कि केवल कुछ शक्तिशाली देशों को ही।

अंत में, यह कहना उचित होगा कि ट्रम्प के पास एक ऐसा रास्ता चुनने का अवसर है जो दुनिया को अधिक शांतिपूर्ण और समृद्ध भविष्य की ओर ले जा सकता है। अब यह उन पर निर्भर करता है कि वह इस अवसर का उपयोग कैसे करते हैं।

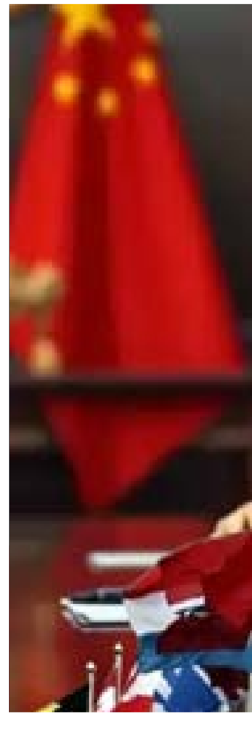

टैरिफ से मची उथल-पुथल ट्रंप का ट्रेड वार पड़ा उल्टा

विटाली रयुमशिन

'मैंने आधिकारिक तौर पर सब कुछ देख लिया है।'

मुझे याद नहीं कि हाल ही में कितनी बार यह वाक्यांश मेरे दिमाग में गूंजा है। हर बार जब डोनाल्ड ट्रम्प स्थापित वैश्विक व्यवस्था के किसी हिस्से को जलाते हैं, तो मैं खुद को खाली घूरता हुआ पाता हूं, यह सोचकर कि हम इस बिंदु पर कैसे पहुंचे - और आधुनिक राजनीति के बज रहे धुन में मैंने कौन से महत्वपूर्ण लय को छोड़ दिया है।

अपने अभियान के दौरान, ट्रम्प ने अमेरिका के प्रत्येक व्यापारिक साझेदार को 'सबक सिखाने' के वादे किए। अपने वादे के अनुसार, उन्होंने उस खतरे को परखने में कोई समय बर्बाद नहीं किया। उन्होंने फरवरी में एक परीक्षण गुब्बारा उड़ाया, कनाडा और मैक्सिको से आयात पर टैरिफ लगाया, जिसमें प्रवासन और ड्रग तस्करी को पर्याप्त रूप से संबोधित करने में उनकी कथित विफलता का हवाला दिया। ओटावा और मैक्सिको सिटी ने जल्दी से आत्मसमर्पण कर दिया, जिससे ट्रम्प के इस स्पष्ट विश्वास को बल मिला कि टैरिफ की धमकियाँ राष्ट्रों को बातचीत में मजबूर कर सकती हैं। इस स्पष्ट सफलता ने उन्हें इस रणनीति को विश्व स्तर पर विस्तारित करने के लिए प्रोत्साहित किया।

परिणामस्वरूप अराजकता, सच कहूँ तो, कई लोगों की अपेक्षा से अधिक मनोरंजक थी।

बाजार लड़खड़ा गए। तेल की कीमतें गिर गईं। अर्थशास्त्रियों ने घबराहट के साथ आसन्न मंदी की भविष्यवाणी की। अमेरिकियों ने, शायद अस्थिरता को भांपते हुए, आवश्यक वस्तुओं का भंडारण शुरू कर दिया। मीडिया, अनुमान के मुताबिक, एक उन्माद में लगे रहे, जो सामने आ रहे आर्थिक नाटक के लिए सबसे सनसनीखेज उपनामों को गढ़ने की होड़ में थे। व्हाइट हाउस, इस बीच, भयावह रूप से शांत रहा, यह जोर देकर कहा कि सब कुछ 'योजना के अनुसार' आगे बढ़ रहा है।

और सटीक रूप से यह योजना क्या थी? ट्रम्प ने स्वयं इसे स्पष्ट रूप से व्यक्त किया: दुनिया को 'उनकी अंगूठी चूमने' के लिए मजबूर करना।

यह क्लासिक ट्रम्प की कार्यशैली का सार है - जिसे कुछ लोगों ने उनकी 'मनोरोगी रणनीति' का नाम दिया है। वह एक संकट पैदा करते हैं, फिर 'सद्भावना' के प्रदर्शन के रूप में सावधानीपूर्वक कैलिब्रेटेड रोलबैक की पेशकश करते हैं, बदले में रियायतें मांगते हैं। इस मामले में, वांछित रियायतों में अमेरिका के व्यापार घाटे को ठीक करना और अमेरिकी धरती पर विनिर्माण व नौकरियों की वापसी को प्रोत्साहित करना शामिल था।

हालांकि, इस बार, ट्रम्प ने शायद अतिरेक कर दिया। एक साथ पूरी दुनिया के साथ ट्रेड वार शुरू करने से न केवल सरकारों को अस्थिर किया गया; इसने घर में अमेरिकियों को भी डरा दिया। जनता का एक बड़ा हिस्सा राष्ट्रपति और उनके प्रशासन को, उदारतापूर्वक कहें तो, बुनियादी दक्षता की कमी के रूप में देखने लगा।

इस व्यापक असंतोष ने डेमोक्रेट्स को पहल करने के लिए एक दुर्लभ अवसर प्रस्तुत किया। उदारवादी समूहों और कार्यकर्ता संगठनों द्वारा संचालित राष्ट्रव्यापी एंटी-टैरिफ विरोध प्रदर्शन हुए। ट्रम्प को बराक ओबामा और कमला हैरिस जैसी प्रमुख हस्तियों से सार्वजनिक निंदा का सामना करना पड़ा। कांग्रेसी अल ग्रीन ने महाभियोग के प्रस्ताव पेश करने के अपने (तीसरे) इरादे की भी घोषणा की।

और खतरे की घंटी केवल बाईं ओर से ही नहीं बज रही थी।

सीनेट वाणिज्य समिति के अध्यक्ष रिपब्लिकन सीनेटर टेड क्रूज़ ने 2026 के मध्यावधि चुनावों में जीओपी के लिए एक संभावित 'रक्तपात' की चेतावनी दी, अगर टैरिफ ने पूर्ण मंदी को ट्रिगर किया। वॉल स्ट्रीट पर अरबपतियों - जिनमें से कई ने पहले ट्रम्प का समर्थन किया था - उन्होंने अपनी नाखुशी व्यक्त करना शुरू कर दिया। विशेष रूप से, लंबे समय से ट्रम्प के सहयोगी एलन मस्क ने सार्वजनिक रूप से राष्ट्रपति के व्यापार सलाहकार पीटर नवारो की आलोचना करते हुए उन्हें 'एक बेवकूफ' और 'आलू की बोरी' तक बताया। बढ़ते राजनीतिक, वित्तीय और सार्वजनिक दबाव का सामना करते हुए, ट्रम्प प्रशासन ने तेजी से रुख बदला। 9 अप्रैल को, ट्रम्प ने घोषणा की कि 75 देशों ने व्यापार सौदों की मांग करते हुए उनसे संपर्क किया था। जवाब में, उन्होंने अस्थायी रूप से 90 दिनों की अवधि के लिए टैरिफ को 10% तक कम कर दिया, इसे बातचीत के लिए एक अवसर के रूप में पेश किया।

लेकिन हर कोई झुक नहीं रहा है।

विशेष रूप से, चीन कहीं अधिक दुर्जेय विरोधी साबित हुआ है। अमेरिका-चीन ट्रेड वार लगातार बढ़ रहा है, पारस्परिक टैरिफ अब आश्चर्यजनक रूप से 145% तक पहुंच गए – फिर बाद में यह बढ़ कर 245% पहुंच गया। यदि इस पर अंकुश नहीं लगाया गया, तो दुनिया की दो सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं के बीच व्यापार 80% तक गिर सकता है, जिसके दोनों पक्षों के लिए संभावित रूप से विनाशकारी परिणाम होंगे।

तो, आगे क्या है?

दो परिदृश्य सबसे अधिक प्रशंसनीय लगते हैं। या तो ट्रम्प अपने व्यापारिक साझेदारों को त्वरित रियायतों के लिए दबाव डालते हैं और विजयी रूप से जीत की घोषणा करते हैं, या वह प्रयास को बीच में ही छोड़ देते हैं, एक नया ध्यान भटकाने की तलाश में - ठीक उसी तरह जैसे उन्होंने यूक्रेन की स्थिति को संभाला था।

क्या आपको वह प्रचार याद है जब ट्रम्प ने यूक्रेन में '24 घंटों के भीतर' शांति समझौते की मध्यस्थता करने का वादा किया था? या कम से कम, '100 दिनों के भीतर'? जिस क्षण यह स्पष्ट हो गया कि यह प्राप्त नहीं किया जा सकता है, व्हाइट हाउस ने अचानक इस मामले पर सभी चर्चाएं बंद कर दीं।

यह ट्रम्प का तरीका है। एक तमाशा बनाएँ, मीडिया पर हावी रहें, फिर चुपचाप आगे बढ़ें जब रणनीति अपनी प्रभावशीलता खो देती है।

और आइए यह न भूलें कि उनके पास अभी भी खेलने के लिए कुछ पत्ते बचे हैं। उदाहरण के लिए, गाजा, जिसे उन्होंने एक बार 'मध्य पूर्व का रिवेरा' बताया था। या ईरानी परमाणु मुद्दा, उनकी अवास्तविक 'शानदार विचारों' का एक और पसंदीदा विषय।

तो, नहीं - मैं यह दावा नहीं करूंगा कि मैंने सब कुछ देख लिया है। अगर कुछ भी है, तो हाल की घटनाओं ने मुझे सिखाया है कि ट्रम्प के साथ, हमेशा और भी पागलपन आसपास ही मंडरा रहा होता है।

और वास्तव में परेशान करने वाला हिस्सा? कभी-कभी, सभी बाधाओं के बावजूद, यह वास्तव में काम करता है।

यह लेख पहली बार ऑनलाइन समाचार पोर्टल Gazeta.ru पर प्रकाशित किया गया था और इसे कल्ट करंट की संपादकीय टीम द्वारा अनुवादित और संपादित किया गया है।

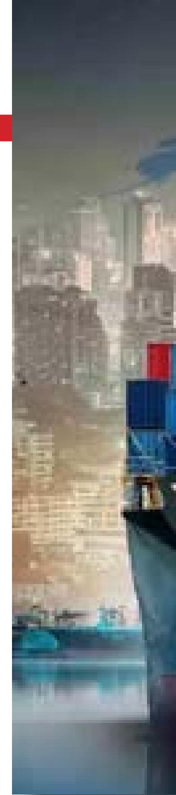

ट्रंप का टैरिफ दांव
क्या यह वैश्विकरण का अंत है?

डोनाल्ड ट्रम्प को आप चाहे पसंद करें या नापसंद, लेकिन टैरिफ के मामले में शायद उन्होंने कोई सही चाल चली थी। क्या ये मुमकिन है कि उनका 'अमेरिका फर्स्ट' (अमेरिका पहले) का नारा सिर्फ़ एक दिखावा नहीं था? शायद ये बात चौंकाने वाली लगे। लेकिन ये व्यापारिक बाधाएँ ब्रिक्स देशों - ब्राजील, रूस, भारत, चीन और दक्षिण अफ्रीका - के दबदबे वाली दुनिया और डी-डॉलराइजेशन के खिलाफ आखिरी और सबसे कारगर हथियार साबित हो सकती हैं। अब वक़्त है कि ट्रम्प की आर्थिक नीतियों के बारे में आपने जो भी सोचा है, उस पर दोबारा विचार करें। क्या हम वैश्विकरण के अंत के गवाह तो नहीं बन रहे हैं?

एन्जेलो जूलियानो

मैं खुद डोनाल्ड ट्रम्प का समर्थक नहीं हूँ। फिर भी, मैं टैरिफ में वैश्विकरण और ब्रिक्स देशों - ब्राजील, रूस, भारत, चीन और दक्षिण अफ्रीका - के नेतृत्व में बन रही बहुध्रुवीय दुनिया के खिलाफ एक रणनीतिक पलटवार करने की क्षमता को ज़रूर पहचानता हूँ।

टैरिफ दरअसल वो टैक्स हैं जो संयुक्त राज्य अमेरिका में आयात होने वाले सामानों पर लगते हैं। ये टैक्स विदेशी सरकारें नहीं, बल्कि अमेरिकी आयातक भरते हैं। उदाहरण के लिए, अगर कोई कंपनी टैरिफ के दायरे में आने वाले चीनी स्टील का आयात करती है, तो उसे अमेरिकी कस्टम पर ज्यादा पैसे देने होंगे, और अक्सर इस अतिरिक्त लागत को ग्राहकों से ज्यादा कीमतें वसूलकर पूरा किया जाता है। ट्रम्प ने अमेरिकी उद्योगों को बचाने, घरेलू उत्पादन को बढ़ावा देने और वैश्विकरण के बढ़ते दायरे को रोकने के लिए टैरिफ का जमकर इस्तेमाल किया। उन्होंने स्टील, एल्यूमीनियम और कई चीनी सामानों पर ये टैक्स लगाए। वैश्विकरण ने कुछ देशों को बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए सिर्फ़ एक राहदारी का रास्ता बना दिया था। टैरिफ अमेरिका के भारी व्यापार घाटे को भी कम करने में मदद करते हैं, जहाँ आयात, निर्यात से कहीं ज्यादा होता है। विदेशी सामानों पर टैक्स बढ़ाकर, अमेरिकी उत्पादन को बढ़ावा दिया जा सकता है और इस खाई को पाटा जा सकता है। इतिहास में देखें तो, अमेरिका अपनी सरकार चलाने के लिए पूरी तरह से टैरिफ पर ही निर्भर था। 18वीं और 19वीं शताब्दी में यही चलन था, जब इनकम टैक्स का कोई वजूद ही नहीं था। 1913 में 16वें संशोधन से पहले, सड़कें, रक्षा और प्रशासन जैसे संघीय कार्य, बिना किसी की कमाई पर टैक्स लगाए, टैरिफ से ही चलते थे। ट्रम्प का टैरिफ-भारी दृष्टिकोण इसी प्रणाली को थोड़ा बदलकर आर्थिक लक्ष्यों को हासिल करने की कोशिश करता है। इससे चीन जैसे कर्जदाताओं पर निर्भरता कम होती है, जिनके पास अमेरिका के कर्ज़ का एक बड़ा हिस्सा है। हालाँकि, कई लोग टैरिफ को प्रतिबंधों के साथ मिला देते हैं, और सोचते हैं कि इसका मकसद सज़ा देना है। ट्रम्प के दौर में, टैरिफ साफ़ तौर पर एक आर्थिक हथियार है, जो अमेरिकी हितों को सबसे ऊपर रखकर उनके 'अमेरिका फर्स्ट' के एजेंडे को आगे बढ़ाता है। ये अमेरिकी नेतृत्व में बनी वैश्विक प्रणाली से - जहाँ अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और संस्थाओं का दबदबा था - एक ऐसे अमेरिकी-केंद्रित साम्राज्यवाद की ओर बदलाव है, जो आर्थिक ताकत के दम पर अपना दबदबा कायम करता है, और शायद प्रतिस्पर्धा वाले प्रभाव क्षेत्रों से घिरी एक बहुध्रुवीय दुनिया का रास्ता बनाता है।

अमेरिका के पास एक ज़बरदस्त फ़ायदा हैः इसका बाज़ार कई देशों के निर्यात का एक बड़ा हिस्सा है, जिससे उसे काफ़ी दबदबा मिलता है। कनाडा, मैक्सिको और चीन जैसे देश अमेरिकी उपभोक्ताओं पर

बहुत ज्यादा निर्भर हैं - अमेरिका जितना उनके बाजारों पर निर्भर नहीं है। जब ट्रम्प ने कनाडाई स्टील पर टैरिफ लगाया, तो कनाडा पर तुरंत दबाव आ गया, क्योंकि अमेरिकी व्यापार खोना उनके लिए मुश्किल था। मेक्सिको भी टैरिफ की धमकियों के आगे व्यापार वार्ताओं के दौरान झुक गया, और दक्षिण कोरिया को भी ऐसी ही मुश्किलों का सामना करना पड़ सकता है। ये असमानता टैरिफ की ज़बरदस्ती करने की ताकत को बढ़ाती है, जिससे छोटी अर्थव्यवस्थाएँ विरोध करने के बजाय समझौता करने पर मजबूर हो जाती हैं।

हाल के सालों में, टैरिफ से अच्छी-खासी कमाई हुई है, जो पुराने समय में संघीय आय का एकमात्र स्रोत होने की अपनी ऐतिहासिक भूमिका को दोहराती है। इससे एक ऐसा सरकारी फंड बनाया जा सकता है - जिसमें शायद सोना या क्रिप्टोकरेंसी में निवेश किया जाए - जिससे अमेरिकी अर्थव्यवस्था को मज़बूत किया जा सके, महंगाई से लड़ा जा सके या डिजिटल तरक्की का फ़ायदा उठाया जा सके। रणनीति के तौर पर देखें तो, इससे वाशिंगटन द्वारा विरोधी माने जाने वाले देशों, जैसे रूस और चीन पर निर्भरता कम करके राष्ट्रीय सुरक्षा को बढ़ाया जा सकता है, और दुर्लभ पृथ्वी या ऊर्जा जैसी ज़रूरी चीज़ों की आपूर्ति में आने वाली रुकावटों से बचाया जा सकता है। जो लोग वैश्विकरण के विरोधी हैं, उनके लिए टैरिफ संप्रभुता को वापस पाने का एक ज़रिया है, और इससे वित्तीय लाभ भी होता है। ये विश्व व्यापार संगठन (WTO) जैसे अंतरराष्ट्रीय संगठनों से बाहर निकलने का भी इशारा करते हैं, जिन्हें ट्रम्प रुकावट मानते हैं। डब्ल्यूटीओ के नियमों को नज़रअंदाज़ करने से वैश्विक व्यापार के ढाँचे से हटने का अंदेशा हो सकता है, जिससे यूरोपीय संघ में भी उथल-पुथल मच सकती है, जहाँ जर्मनी और इटली जैसे अलग-अलग हितों से मतभेद बढ़ सकते हैं। हो सकता है कि ये अमेरिका की तरफ से ब्रिक्स के उदय का मुकाबला करने का आखिरी प्रयास हो, और ये अमेरिका के नेतृत्व वाले वैश्विकरण से अलग, विशिष्ट प्रभाव क्षेत्रों वाली बहुध्रुवीय दुनिया में बदलाव का विरोध कर रहा हो।

अमेरिकी डॉलर की दुनिया की आरक्षित मुद्रा के तौर पर स्थिति बहुत अहमियत रखती है, क्योंकि इससे कम ब्याज पर कर्ज़ लेना, प्रभावी प्रतिबंध लगाना और व्यापार में दबदबा बनाए रखना आसान होता है। टैरिफ व्यापार घाटे को कम करके और सरकारी योजनाओं को पैसे देकर इसे और मज़बूत करते हैं। लेकिन ब्रिक्स के डी-डॉलरीकरण के प्रयास - यानी डॉलर के बजाए दूसरी मुद्राओं को बढ़ावा देना - इसकी नींव को हिला रहे हैं। अगर डॉलर का दबदबा कमज़ोर होता है, तो सरकारी फंड बनाना या उद्योगों को फिर से खड़ा करना मुश्किल हो जाएगा, विदेशी निवेश कम हो जाएगा और अमेरिका का प्रभाव घट जाएगा। ब्रिक्स के बहुध्रुवीय नज़रिए के मुकाबले, टैरिफ आर्थिक ताकत को बचाए रखने का एक ज़रूरी दांव है; अगर डॉलर का दबदबा खो गया तो ये तरीका बेकार हो जाएगा।

हालाँकि, कमियाँ भी कम नहीं हैं। आयात की लागत बढ़ने से कपड़े, इलेक्ट्रॉनिक्स और गाड़ियों जैसी चीज़ों की कीमतें बढ़ जाती हैं, जिससे अमेरिका में पहले से ही बढ़ती कीमतों का दबाव और बढ़ जाता है, और परिणामस्वरूप महंगाई बढ़ती है। आपूर्ति श्रृंखलाएँ, जो पहले से ही उलझी हुई हैं, और ज्यादा बाधित होती हैं, जिससे देरी और कमी होती है। विदेशी घटकों पर निर्भर उद्योग - जैसे ऑटोमोबाइल बनाने

टैरिफ का तमाशा: क्या अमेरिका लूट रहा भारत की खेती?

दो अप्रैल 2025 को, अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने एक ऐसा फैसला लिया जिसने भारत के कृषि जगत में भूचाल ला दिया। उन्होंने भारतीय बासमती चावल पर 26% का 'प्रतिसंवेदनात्मक' टैरिफ लगा दिया। ट्रंप ने इसे अमेरिका के लिए 'लिबरेशन डे' बताया, उनका दावा था कि इससे अमेरिका का व्यापार घाटा कम होगा और घरेलू उद्योगों को सुरक्षा मिलेगी। लेकिन इस कदम ने भारत के बासमती चावल उत्पादकों की नींद उड़ा दी। क्या यह सिर्फ एक व्यापारिक फैसला है, या फिर एक सोची-समझी रणनीति के तहत भारतीय किसानों को बर्बाद करने की साजिश?

भारत दुनिया का सबसे बड़ा बासमती चावल निर्यातक देश है। वित्तीय वर्ष 2024-25 में भारत ने 59.4 लाख टन बासमती चावल का निर्यात किया, जिसमें पंजाब और हरियाणा की प्रमुख भूमिका रही। इस चावल की खुशबू विदेशों में भी भारत की पहचान बन गई थी। अमेरिका भारतीय बासमती चावल का एक बड़ा खरीदार था और अब तक सिर्फ 10% आयात शुल्क लगाता था। इससे भारतीय उत्पादकों को एक अच्छी प्रतिस्पर्धात्मकता मिलती थी, वे अपनी फसलें बेचकर अच्छा मुनाफा कमा रहे थे। लेकिन ट्रंप के नए टैरिफ ने इस सुनहरे सपने को चकनाचूर कर दिया।

अप्रैल 2025 में अमेरिकी उपराष्ट्रपति जेडी वेंस भारत आए। मकसद था दोनों देशों के बीच व्यापारिक रिश्तों को और मजबूत करना। उन्होंने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी से मुलाकात की और कई व्यापारिक समझौतों पर बातचीत की। वेंस ने भारत से अमेरिकी रक्षा उपकरण खरीदने और ऊर्जा के क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने की बात की। बदले में भारत को उम्मीद थी कि अमेरिका बासमती चावल पर लगे टैरिफ में कुछ छूट देगा, लेकिन यह समझौता अभी तक कागजों से ज़मीन पर नहीं उतर पाया है। क्या वेंस का दौरा सिर्फ एक दिखावा था, या वाकई अमेरिका भारत के साथ दोस्ती निभाना चाहता है?

नए टैरिफ के कारण भारतीय बासमती चावल की अमेरिकी बाजार में कीमत बढ़ गई है, जिससे उसकी प्रतिस्पर्धात्मकता कम हो गई है। पाकिस्तान, जो पहले से ही कम कीमत पर चावल बेचता था, अब इस मौके का फायदा उठाने की कोशिश कर रहा है। अमेरिकी आयातक भी भारतीय निर्यातकों पर दबाव बना रहे हैं कि वे 26% टैरिफ का बोझ खुद उठाएं, जिससे भारतीय निर्यातकों की हालत और भी खराब हो रही है।

छोटे किसानों पर तो मानो आसमान ही टूट पड़ा है। उनके पास इतना पैसा नहीं है कि वे टैरिफ का बोझ उठा सकें, और अगर उनकी फसलें नहीं बिकती हैं, तो उनके परिवार भूखे मर जाएंगे। क्या ये सिर्फ व्यापार है, या फिर किसी की जान लेने का खेल?

भारत के बासमती चावल उत्पादक किसान इस मुश्किल दौर में सरकार की ओर टकटकी लगाए देख रहे हैं। किसान यूनियनों ने सरकार से गुहार लगाई है कि वे अमेरिका के साथ बातचीत करके इस टैरिफ को हटवाएं। उनका कहना है कि अगर सरकार ने उनकी मदद नहीं की, तो उन्हें बासमती की खेती छोड़नी पड़ेगी और साधारण धान की

वाली कंपनियों को सेमीकंडक्टरों की ज़रूरत होती है - मुश्किलों का सामना करते हैं, जबकि छोटी कंपनियां मुकाबला करने के लिए संघर्ष करती हैं। जवाबी कार्रवाइयां स्थिति को और भी बिगाड़ देती हैं: चीन ने अमेरिकी कृषि निर्यात को निशाना बनाया है, और यूरोप ने भी ऐसा ही किया है। एस.टी.ई.एम. (STEM) पेशेवरों - इंजीनियरों और प्रौद्योगिकीविदों - की कमी की वजह से तेज़ी से औद्योगिक पुनर्विकास करने में दिक्कत होती है। कुछ उत्पाद, जैसे स्मार्टफोन या दुर्लभ-पृथ्वी-निर्भर तकनीकें, उच्च श्रम खर्च और सीमित संसाधनों के कारण देश में ही बनाने में बहुत ज्यादा महंगी पड़ेंगी। दोबारा औद्योगिकीकरण करने के लिए बुनियादी ढाँचे, प्रशिक्षण और समय में भारी निवेश की ज़रूरत होती है - स्टील मिलों जैसी नई सुविधाओं को विकसित होने में सालों लग जाते हैं।

वैश्विकरण के विरोधियों के लिए, टैरिफ व्यापार घाटे को कम करते हैं, पुराने ज़माने के टैरिफ-विशिष्ट धन की याद दिलाते हुए संप्रभुता को पैसे देते हैं, और क्षेत्रीय शक्तियों की बहुध्रुवीय दुनिया की तरफ ब्रिक्स की गति का विरोध करते हुए डब्ल्यूटीओ के अधिकार को चुनौती देते हैं। कनाडा और मेक्सिको पर अमेरिका का जो प्रभाव दिखता है, उससे साफ है कि अमेरिका का निर्यात लाभ उसकी स्थिति को और मजबूत करता है। डब्ल्यूटीओ से हटने से अमेरिकी नीति स्वतंत्र हो सकती है, और यूरोपीय संघ में दरारें और गहरी हो सकती हैं, जैसे कि फ्रांस और पोलैंड के बीच। फिर भी, कुशल श्रमिकों की कमी, बढ़ी हुई लागत और लंबी समय-सीमा जोखिम पैदा करते हैं। महंगाई बढ़ती है, आपूर्ति श्रृंखलाएँ लड़खड़ाती हैं, और व्यापार विवाद बढ़ते हैं - चीन की प्रतिक्रियाएं जानबूझकर होती हैं, और यूरोपीय संघ डटा रहता है। घाटा कम हो सकता है, लेकिन चीज़ें महंगी होंगी और कम मिलेंगी। डॉलर का दबदबा ज़रूरी है; डी-डॉलरीकरण इस रणनीति को कमज़ोर करता है।

इसमें काफ़ी आकर्षण है: टैरिफ राजस्व

पैदा करते हैं, घाटे को कम करते हैं, विरोधियों का मुकाबला करते हैं और ब्रिक्स के खिलाफ अमेरिकी बाज़ार के प्रभाव का लाभ उठाते हैं, और ये ट्रम्प की आर्थिक 'अमेरिका फर्स्ट' रणनीति से मेल खाते हैं - यानी दंडात्मक प्रतिबंधों के बजाय वैश्विक सहयोग से साम्राज्यवादी दावे की तरफ बढ़ना। ये राजस्व, उस दौर को याद दिलाता है जब सिर्फ़ टैरिफ से ही सरकार चलती थी, और इनकम टैक्स का कोई नामोनिशान नहीं था। इससे उम्मीदें जगती हैं - स्थिरता के लिए सोना, और इनोवेशन के लिए क्रिप्टोकरेंसी। फिर भी, इसे लागू करना बेहद मुश्किल है। महंगाई का दबाव बढ़ता है, आपूर्ति में रुकावट बनी रहती है, और कारोबार - खासकर छोटे - परेशान होते हैं, जबकि बड़ी कंपनियाँ धीरे-धीरे बदलती हैं। कनाडा और मेक्सिको जैसे देशों के अमेरिकी दबाव में आने से व्यापार घाटे में थोड़ा सुधार हो सकता है। डब्ल्यूटीओ से बाहर निकलने से वैश्विक व्यापार के कायदे टूट सकते हैं, और यूरोपीय संघ के विभाजन और बढ़ सकते हैं, जो बहुध्रुवीय बदलाव का संकेत देते हैं। ब्रिक्स का विरोध करने में, डॉलर की भूमिका सबसे ऊपर है - अगर डॉलर का दबदबा कम हुआ तो सब कुछ बेकार हो जाएगा। सुरक्षा मज़बूत हो सकती है, लेकिन आर्थिक स्थिरता कमज़ोर हो सकती है। वैश्विकरण के विरोधियों के लिए, ये नियंत्रण, संसाधन और विरोध करने का हौसला देता है। अमेरिका के लिए ये एक ऊँचा दाँव है: अगर सफल हुआ तो उम्मीदें भरी हैं, और अगर विफल हुआ तो खतरे ही खतरे हैं। जैसे-जैसे बहुध्रुवीय युग आगे बढ़ रहा है, प्रभाव क्षेत्र उभर रहे हैं, ये शायद इसका आखिरी पलटवार हो।

एन्जेलो जूलियानो, चीन में एक वित्तीय सलाहकार और भू-राजनीतिक विश्लेषक के रूप में 30 वर्षों से अधिक का अनुभव रखने वाले एक राजनीतिक और वित्तीय विश्लेषक हैं, और यह लेख पहली बार RT News द्वारा प्रकाशित किया गया था और इसे कल्ट करंट की संपादकीय टीम द्वारा संपादित किया गया है।

खेती करनी पड़ेगी। इससे बासमती चावल की खेती में भारी गिरावट आ सकती है, और भारत अपनी एक पहचान खो देगा।

सरकार पर दबाव है कि वह किसानों के हितों की रक्षा करे, लेकिन अमेरिका के आगे झुकना भी आसान नहीं है। क्या सरकार कूटनीति और व्यापार के इस मुश्किल खेल में किसानों की नैया पार लगा पाएगी?

यह सिर्फ बासमती चावल पर लगे टैरिफ का मामला नहीं है। यह भारत और अमेरिका के बीच व्यापारिक रिश्तों, किसानों की जिंदगी और देश की अर्थव्यवस्था का सवाल है। यह एक चेतावनी है कि दुनिया में व्यापार के नियम कितने बेरहम हो सकते हैं, और किस तरह एक फैसला लाखों लोगों की जिंदगी बदल सकता है।

भारत सरकार को इस चुनौती का डटकर सामना करना होगा। उसे न सिर्फ अमेरिका के साथ बातचीत करनी होगी, बल्कि अपने किसानों को भी हर संभव मदद देनी होगी। बासमती सिर्फ एक फसल नहीं, भारत की शान है, और उसे बचाने के लिए हर मुमकिन कोशिश करनी होगी। क्या भारत इस चावल-युद्ध में जीत पाएगा, या फिर उसके किसान इस बेरहम दुनिया में हार मान लेंगे? वक्त ही बताएगा। पर इतना तय है कि इस जंग में हार-जीत से ज्यादा, इंसानियत और हमदर्दी की ज़रूरत है।

अमेरिका-भारत
अंतरिक्ष सहयोग का भविष्य

मंदीप राय

अंतरिक्ष में अग्रणी देश होने के नाते, भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका (अमेरिका) के बीच अंतरिक्ष सहयोग की एक लंबी परंपरा रही है। इसकी शुरुआत 1962 में भारतीय राष्ट्रीय अंतरिक्ष अनुसंधान समिति (INCOSPAR) के गठन के साथ हुई थी, जब भारत ने अमेरिका के समर्थन से थुंबा से अपने पहले साउंडिंग रॉकेट लॉन्च किए थे। यह साझेदारी NASA के ATS-6 का उपयोग करके सैटेलाइट इंस्ट्रक्शनल टेलीविज़न एक्सपेरिमेंट (SITE) जैसी महत्वपूर्ण परियोजनाओं के माध्यम से आगे बढ़ी, जिसके बाद भारतीय राष्ट्रीय सैटेलाइट सिस्टम (INSAT) आया। हालांकि भारत की गुटनिरपेक्ष नीति और पूर्व सोवियत संघ के प्रति झुकाव ने कुछ समय के लिए सहयोग को रोक दिया, लेकिन शीत युद्ध के बाद संबंध काफी हद तक पुनर्जीवित हुए। 2004 भारत के लिए 'अंतरिक्ष पुनर्जागरण' का क्षण था जब दो पेशेवर समाजों ने अंतरिक्ष क्षेत्र में रणनीतिक साझेदारी के पुनर्निर्माण के अवसर प्रदान करने की योजना बनाई। 2005 में नागरिक अंतरिक्ष संयुक्त कार्य समूह (CSJWG) की स्थापना के राजनीतिक निर्णय ने आने वाले वर्षों में संयुक्त उद्यमों का मार्ग प्रशस्त किया। इसने चंद्र अन्वेषण, उपग्रह नेविगेशन और पृथ्वी अवलोकन पर ध्यान केंद्रित किया, जिसमें चंद्रयान-1, NISAR (NASA-ISRO सिंथेटिक एपर्चर रडार), मंगल अन्वेषण और आर्टेमिस समझौते में भारत की भागीदारी शामिल है।

न्यू स्पेस युग में प्रमुख खिलाड़ी होने के नाते, दोनों देश क्रिटिकल एंड इमर्जिंग टेक्नोलॉजीज (iCET) ढांचे पर पहल के तहत एक नई राह पर चल रहे हैं, जिससे नागरिक, सुरक्षा और वाणिज्यिक क्षेत्रों में सहयोग मजबूत हो रहा है। फरवरी 2025 में प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी की अमेरिका यात्रा के दौरान, iCET का नाम बदलकर ट्रांसफॉर्मिंग रिलेशंस यूटिलाइजिंग स्ट्रैटेजिक टेक्नोलॉजीज (TRUST) कर दिया

गया ताकि रक्षा, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI), सेमीकंडक्टर और जैव प्रौद्योगिकी के अलावा अंतरिक्ष में सहयोग को आगे बढ़ाया जा सके। अंतरिक्ष में अपनी सहयोगात्मक उपस्थिति को मजबूत करते हुए, दो भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (ISRO) के अंतरिक्ष यात्री राष्ट्रीय वैमानिकी और अंतरिक्ष प्रशासन (NASA) में प्रशिक्षण लेने वाले हैं, जिससे इस वर्ष निर्धारित एक्सियोम-4 मिशन पर अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन (ISS) के लिए पहले संयुक्त अमेरिकी-भारतीय मिशन का मार्ग प्रशस्त होगा। इस साल NASA-ISRO सिंथेटिक एपर्चर रडार (NISAR) उपग्रह का आगामी प्रक्षेपण दुनिया भर में आपदा प्रबंधन, जलवायु परिवर्तन निगरानी और बुनियादी ढांचा मूल्यांकन में क्षमताओं को महत्वपूर्ण रूप से आगे बढ़ाने के लिए तैयार है। भारत-अमेरिका रक्षा त्वरण पारिस्थितिकी तंत्र (INDUS-X) के तहत प्रस्तावित 'अंतरिक्ष नवाचार पुल' का उद्देश्य उपग्रह प्रौद्योगिकी और अंतरिक्ष स्थितिजन्य जागरूकता में अमेरिकी-भारतीय स्टार्टअप साझेदारी को बढ़ावा देना है। रक्षा में बढ़ते अंतरिक्ष सहयोग से अमेरिकी अंतरिक्ष कमान के ग्लोबल सेंटिनल अभ्यास में भारत की भागीदारी और वाणिज्यिक उपग्रह प्रक्षेपणों का समर्थन करने के लिए चल रही मिसाइल प्रौद्योगिकी निर्यात समीक्षाएं गहरी होती हैं, जिससे बढ़ती अंतरिक्ष अर्थव्यवस्था में उनकी भूमिका प्रमुख खिलाड़ियों के रूप में मजबूत होती है।

अंतरिक्ष अर्थव्यवस्था में अंतर्दृष्टि

अंतरिक्ष रिपोर्ट के नवीनतम अनुमान वैश्विक अंतरिक्ष अर्थव्यवस्था को 570 अरब अमेरिकी डॉलर पर आंकते हैं। 2023 में, अमेरिका का सबसे बड़ा एकल अंतरिक्ष बजट था, फिर भी वैश्विक अंतरिक्ष बजट में इसकी हिस्सेदारी 2000 में 75 प्रतिशत से घटकर 2023 में 60 प्रतिशत हो गई। भारतीय अंतरिक्ष अर्थव्यवस्था का मूल्य वर्तमान में लगभग 8.4 अरब अमेरिकी डॉलर है, जो वैश्विक अंतरिक्ष बाजार का 2 प्रतिशत हिस्सा है। भारत अंतरिक्ष अर्थव्यवस्था को 2033 तक 44 अरब अमेरिकी डॉलर तक पहुंचाने की परिकल्पना करता है, जिसमें 11 अरब अमेरिकी डॉलर का निर्यात भी शामिल है, जो वैश्विक हिस्सेदारी का 7-8 प्रतिशत है। बजट की कमी के बावजूद, ISRO ने NASA की तुलना में 15 गुना छोटे बजट के साथ, कुछ विशिष्ट उपलब्धियां प्रदर्शित की हैं, अर्थात् चंद्रयान-3

मिशन और SpaDeX।

आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (OECD) का 2040 तक के लिए अंतरिक्ष अर्थव्यवस्था का दृष्टिकोण दर्शाता है कि अंतरिक्ष क्षेत्र के परिवर्तन के लिए आपसी चुनौतियों का समाधान करने, वाणिज्यिक और सार्वजनिक मिशनों के लिए उपयुक्त अनुबंध विकसित करने और एक सुरक्षित अंतरिक्ष वातावरण सुनिश्चित करने के लिए देशों के बीच साझेदारी की आवश्यकता है। इसी तरह, दोनों देशों के लिए अंतरिक्ष अर्थव्यवस्था महत्वपूर्ण है और सहयोग, नवाचार और एक सामूहिक दृष्टिकोण पर आधारित है। विकसित हो रही व्यापार चुनौतियों के बीच, अमेरिका और भारत की साझा अंतरिक्ष महत्वाकांक्षाओं को आगे बढ़ाने के लिए एक एकजुट और सहयोगात्मक रणनीति की आवश्यकता और भी अधिक जरूरी हो जाती है।

भारतीय आयात पर संभावित शुल्कों के बढ़ते खतरे से यह सवाल उठता है कि क्या अंतरिक्ष क्षेत्र इस प्रभाव का सामना कर पाएगा। भारत में केंद्रीय बजट 2025-26 में ग्राउंड इंस्टॉलेशन और उपग्रह प्रक्षेपणों पर सीमा शुल्क कम कर दिया गया, साथ ही लॉन्च वाहनों के निर्माण के लिए सामानों पर भी, जिससे इनपुट लागत कम हो गई और विनिर्माण और निर्यात में वृद्धि हुई। IN-SPACe के अध्यक्ष पवन कुमार गोयनका के अनुसार, भारत ने रणनीतिक रूप से अपने अंतरिक्ष क्षेत्र को टैरिफ-संबंधी व्यवधानों से बचाया है, जिससे बढ़ते वैश्विक व्यापार तनावों के खिलाफ लचीलापन बना हुआ है। उन्होंने इस बात पर प्रकाश डाला कि उपग्रह प्रक्षेपणों, जमीनी बुनियादी ढांचे और प्रक्षेपण वाहन घटकों पर टैरिफ में पर्याप्त कमी ने भारत के अंतरिक्ष उद्योग को वैश्विक सोर्सिंग में एक विशिष्ट प्रतिस्पर्धी लाभ के साथ स्थान दिया है। हालांकि कुछ घटकों के आयात के संबंध में मामूली प्रक्रियात्मक चुनौतियां बनी हुई हैं, लेकिन गोयनका ने जोर देकर कहा कि भारत का अंतरिक्ष क्षेत्र काफी हद तक अन्य उद्योगों को प्रभावित करने वाले जवाबी शुल्कों से अप्रभावित है। अंतरिक्ष तकनीक उद्योग के विशेषज्ञों ने इन झटकों के प्रति लचीलेपन की सराहना की और इसे रणनीतिक सोर्सिंग, मजबूत नीति, समर्थन और बढ़ती वैश्विक साझेदारी का संयोजन बताया।

किसी भी अन्योन्याश्रित पारिस्थितिकी तंत्र की तरह, अंतरिक्ष क्षेत्र भी अपने पूरे मूल्य श्रृंखला में व्यापक प्रभावों के प्रति संवेदनशील है, जिसमें कच्चे माल की खरीद से लेकर विकिरण-कठोर घटकों का निर्माण शामिल है, जिससे राष्ट्रीय अंतरिक्ष एजेंसियों और निजी उद्यमों के लिए हानिकारक प्रभावों का खतरा है। मंगल मिशन और NISAR जैसी सरकार समर्थित पहलों से जुड़ी बढ़ती लागत मौजूदा चुनौतियों को और बढ़ा सकती है। साथ ही, आर्थिक दबाव स्टार्टअप प्रतिस्पर्धात्मकता को कम करने, पूंजी तक पहुंच

को बाधित करने और अंततः वैश्विक अंतरिक्ष अर्थव्यवस्था में परिवर्तनकारी नवाचार की गति को धीमा करने का जोखिम उठाते हैं। हालांकि, यह देखते हुए कि दोनों देश अंतरिक्ष साझेदारी को एक भविष्य-केंद्रित क्षेत्र के रूप में महत्व देते हैं, इसलिए कूटनीतिक वार्ताओं, विशेष छूटों, व्यापार के पुनर्समायोजन और अंतरिक्ष साझेदारी में एक सुचारू यात्रा को आगे बढ़ाने के लिए तकनीकी ढांचों के माध्यम से इसे किसी भी अप्रत्यक्ष टैरिफ झटकों से बचाने की सख्त आवश्यकता है।

अंतरिक्ष क्षेत्र AI और अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के एकीकरण का साक्षी बन रहा है, जो मिशन योजना, स्वायत्त नेविगेशन, खगोलीय डेटासेट विश्लेषण, रोबोटिक्स और पृथ्वी अवलोकन में अभूतपूर्व प्रगति कर रहा है। हालांकि, अंतरिक्ष में कई अप्रयुक्त अवसर अभी भी दोनों देशों के लिए मौजूद हैं जहां AI का लाभ उठाया जा सकता है, विशेष रूप से अंतरिक्ष मिशनों और अंतरिक्ष खनन प्रौद्योगिकियों के लिए ऊर्जा समाधानों में।

उपग्रह के मौजूदा उप-प्रणालियों के अलावा, भविष्य के उपग्रहों को अत्याधुनिक एज कंप्यूटिंग और अंतर्निहित AI अवसंरचना - जैसे ग्राफिक्स प्रोसेसिंग यूनिट (GPU) और एल्गोरिदम - के साथ उड़ान पर एज इंटेलिजेंस प्रदान करने के लिए सुसज्जित किया

पता लगाने के लिए अच्छी स्थिति में है। भारत ने लागत प्रभावी अंतरिक्ष प्रौद्योगिकियों (SpaDeX मिशन और ADITYA L1 के माध्यम से प्रदर्शित), प्रणोदन, सामग्री विज्ञान और रोबोटिक्स में प्रगति विकसित करने की क्षमता साबित की है। एक मजबूत अंतरिक्ष अनुसंधान पूल और AI प्रतिभा के साथ संयुक्त, ये ताकतें अंतरिक्ष खनन क्षमता के लिए एक ठोस नींव प्रदान करती हैं। मौजूदा हाइपरस्पेक्ट्रल और टेलीमेट्री डेटा पर उन्नत एल्गोरिदम विकसित करना, जबकि चंद्रयान और NASA के OSIRIS-Rex डेटासेट को एकीकृत करना, क्षुद्रग्रहों की खोज के लिए भविष्य कहनेवाला AI मॉडल बनाने के लिए एक अनूठा अवसर है। दोनों देश गर्मी को ऊर्जा के स्रोत के रूप में उपयोग करने वाले अगली पीढ़ी के रेडियोआइसोटोप थर्मोइलेक्ट्रिक जनरेटर के विकास के माध्यम से निष्कर्षण और शोधन के लिए विभिन्न प्रक्रियाओं को अनुकूलित करने के लिए बुद्धिमान खनन समाधान और इन-सीटू संसाधन उपयोग का पता लगा सकते हैं। दुर्लभ खनिजों की दौड़ से प्रेरित होकर, क्षुद्रग्रह खनन में वैश्विक रुचि तेज होने के साथ, भारत और अमेरिका को AI-सक्षम अंतरिक्ष अन्वेषण के इस अगले मोर्चे में द्विपक्षीय रूप से प्रमुख खिलाड़ियों के रूप में खुद को स्थापित करने के लिए एक रणनीतिक प्रोत्साहन प्राप्त करना चाहिए।

भारत-अमेरिका सहयोग की गति वर्तमान वैश्विक सुरक्षा परिदृश्य और इंडो-पैसिफिक में भारी रणनीतिक और तकनीकी मूल्य रखती है। एक जीवंत और लचीला अंतरिक्ष पारिस्थितिकी तंत्र को बढ़ावा देना जो नवाचार को चलाता है, सहयोग को गहरा करता है और एक सतत मूल्य श्रृंखला का निर्माण करता है, अब वैकल्पिक नहीं बल्कि अनिवार्य है। अभूतपूर्व तकनीकी व्यवधान के बीच स्पेस 2.0 तेजी से विकसित हो रहा है और AI एक बल गुणक के रूप में उभर रहा है, दोनों भारत और अमेरिका को एक अवांट-गार्डे दृष्टिकोण अपनाना चाहिए जो बोल्ड, अनुकूलनीय और भविष्य के लिए तैयार हो। नए अंतरिक्ष युग के एक चौथाई शताब्दी पूरे करने के साथ, निकट भविष्य दूरदर्शी बयानों से अधिक की मांग करता है। इसके लिए दोनों देशों के लिए कार्रवाई योग्य रणनीतियों, तेज निष्पादन और सार्थक साझेदारी की आवश्यकता है ताकि एक खुले और समावेशी इंडो-पैसिफिक अर्थव्यवस्था का निर्माण किया जा सके। आगे रहने के लिए, दोनों देशों को कूटनीतिक दिखावे से आगे बढ़ना चाहिए, हितधारकों को जुटाना चाहिए और महत्वाकांक्षा को वास्तविक प्रभाव में बदलना चाहिए, अंतरिक्ष उन्नति के लिए एक सामूहिक AI विज़न द्वारा परिभाषित एक विरासत तैयार करनी चाहिए।

जाएगा। इसे सक्षम करने के लिए, बिजली एक महत्वपूर्ण डिजाइन कारक बनी हुई है। ट्रिटियम और निकल 63 जैसे आइसोटोप से बीटा विकिरण AI-सक्षम उपग्रह डिजाइन में बिजली चुनौतियों पर काबू पाने के लिए विकल्प हो सकते हैं। NASA गहरे अंतरिक्ष मिशन, क्यूबसैट, अंतरिक्ष यान के लिए स्वायत्त बिजली प्रणालियों और SATCOM (उपग्रह संचार) नेटवर्क सहित विविध भविष्य के अनुप्रयोगों के लिए अल्ट्रा-हाई एनर्जी डेंसिटी बैटरी में इस सफलता का उपयोग करने की योजना बना रहा है। AI-सक्षम गहरे अंतरिक्ष मिशनों के लिए बीटा-वोल्टिक बैटरी प्रौद्योगिकी के सह-विकास और साझा करने में एक आशाजनक सहयोग का मार्ग निहित है, जो 20 साल के जीवनकाल पर विचार करने पर पारंपरिक लिथियम-आयन बैटरी की तुलना में लगभग 100 गुना अधिक वॉल्यूमेट्रिक ऊर्जा घनत्व प्रदान करते हैं, जबकि अंतरिक्ष में ऊर्जा सुरक्षा को मजबूत करते हैं।

AI अंतरिक्ष खनन के एक महत्वाकांक्षी क्षेत्र के लिए एक महत्वपूर्ण प्रवर्तक के रूप में उभरा है। जबकि ISRO का वर्तमान ध्यान चंद्र और मंगल अन्वेषण पर बना हुआ है, भारत, आर्टेमिस समझौते के हस्ताक्षरकर्ता के रूप में, अपने मजबूत AI पारिस्थितिकी तंत्र द्वारा समर्थित, क्षुद्रग्रह खनन के बढ़ते क्षेत्र का

मंदीप राय, रक्षा उपग्रह नियंत्रण केंद्र (DSCC), भारत सरकार में निदेशक हैं।

ट्रंप एवं तेहरान के बीच आखिर कौन सी पक रही है खिचड़ी

फारहाद इब्रागिमोव

बीते सप्ताह, अमेरिका-ईरान परमाणु वार्ता का दूसरा दौर रोम में हुआ, जो ओमान के मस्कट में एक सप्ताह पहले हुई प्रारंभिक बैठक के बाद हुआ था। दोनों पक्षों ने वार्ता को 'रचनात्मक' बताया था, लेकिन वह आशावाद जल्दी ही ट्रम्प प्रशासन से आने वाले विरोधाभासी संकेतों की लहर से टकरा गया। उत्साहजनक लहजे के बावजूद, यह स्पष्ट नहीं रहा कि क्या एक नया परमाणु समझौता वास्तव में पहुंच के भीतर था।

बातचीत की शुरुआत में, राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार माइक वाल्ट्ज - एक मुखर ईरान विरोधी - ने एक सख्त शर्त रखीः अगर ईरान अमेरिका के साथ कोई समझौता चाहता है तो उसे अपने यूरेनियम संवर्धन कार्यक्रम को पूरी तरह से खत्म करना होगा। लेकिन मस्कट बैठक के बाद, मध्य पूर्व के विशेष दूत स्टीव विटकोफ, जिन्होंने अमेरिकी प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व किया, ने एक बहुत ही अलग नोट मारा। फॉक्स न्यूज के साथ एक साक्षात्कार में, उन्होंने सुझाव दिया कि तेहरान को शांतिपूर्ण ऊर्जा उद्देश्यों के लिए सीमित यूरेनियम संवर्धन बनाए रखने की अनुमति दी जा सकती है - कुछ ऐसा जो कुछ दिन पहले तक एक गैर-शुरुआती होता।

विटकोफ ने ईरान की परमाणु क्षमताओं के किसी भी सैन्यीकरण को रोकने के लिए सख्त सत्यापन प्रोटोकॉल के महत्व पर जोर दिया, जिसमें मिसाइल प्रौद्योगिकी और डिलीवरी सिस्टम की निगरानी शामिल है। उनकी टिप्पणियों से उल्लेखनीय रूप से अनुपस्थित? 'विघटन' का कोई उल्लेख नहीं। इस बदलाव ने संकेत दिया कि प्रशासन 2015

की संयुक्त व्यापक कार्रवाई योजना (जेसीपीओए) में संशोधित वापसी पर विचार कर रहा होगा - वही समझौता जिसे ट्रम्प ने 2018 में फाड़ दिया था, इसे 'आपदा' करार दिया था।

लेकिन वह बदलाव ज्यादा दिन नहीं चला। केवल एक दिन बाद, विटकोफ ने एक्स पर एक पोस्ट में अपना रुख बदल दिया, जिसमें ईरान के परमाणु और हथियार कार्यक्रमों के पूर्ण विघटन की मांग पर दोगुना जोर दिया गया। तो वाक्पटुतापूर्ण चाबुक को किसने ट्रिगर किया?

एक्सियोस के अनुसार, ट्रम्प ने अमेरिकी रणनीति का पुनर्मूल्यांकन करने के लिए मस्कट वार्ता के ठीक तीन दिन बाद शीर्ष राष्ट्रीय सुरक्षा अधिकारियों के साथ मुलाकात की। उस बैठक में, उपराष्ट्रपति जेडी वेंस, विटकोफ और रक्षा सचिव पीट हेगसेथ ने एक व्यावहारिक दृष्टिकोण की वकालत की। तेहरान को अपने पूरे परमाणु बुनियादी ढांचे को खत्म करने के लिए जोर देना, उन्होंने चेतावनी दी, वार्ता को टैंक कर देगा। ईरान ने पहले ही स्पष्ट कर दिया था कि इस तरह की व्यापक रियायतें टेबल से बाहर हैं। वेंस ने यहां तक सुझाव दिया कि वाशिंगटन को कुछ स्तर के समझौते के लिए तैयार रहना चाहिए।

लेकिन हर कोई सहमत नहीं था। वाल्ट्ज और विदेश मंत्री मार्को रुबियो के नेतृत्व में एक प्रतिद्वंद्वी गुट - ने चीजों को अलग तरह से देखा। उन्होंने तर्क दिया कि ईरान की वर्तमान भेद्यता ने अमेरिका को एक अनूठा ऊपरी हाथ दिया है, जिसे बर्बाद नहीं किया जाना चाहिए। उन्होंने जोर देकर कहा कि अगर तेहरान अमेरिका की शर्तों को पूरा करने में विफल रहता है, तो अमेरिका को सैन्य रूप से हमला करने या इजरायली कार्रवाई को हरी बत्ती देने के लिए तैयार रहना चाहिए।

यह विभाजन ट्रम्प प्रशासन के भीतर एक गहरी रणनीतिक दरार को उजागर करता है। उस अधिकतमवादी दृष्टिकोण के बीच कि ईरान को पूरी तरह से निहत्था किया जाना चाहिए और अधिक लचीली स्थिति जो शांतिपूर्ण संवर्धन को बनाए रखते हुए हथियार बनाने को रोकने का लक्ष्य रखती है, एक विशाल भूरा क्षेत्र है। एक एकीकृत संदेश - या यहां तक कि बुनियादी सहमति - की कमी के कारण अमेरिका को एक अनुभवी और समन्वित ईरानी वार्ता दल के खिलाफ नुकसान में होने का खतरा है।

संक्षेप में, ट्रम्प खुद को एक कठिन संतुलनकारी कार्य में पाते हैं। एक तरफ, यह स्पष्ट है कि वह सैन्य वृद्धि से बचना चाहते हैं। विटकोफ को भेजने का निर्णय - एक ऐसा व्यक्ति जो समझौता करने की अपनी इच्छा के लिए जाना जाता है - तलवार-लहराने पर कूटनीति में एक वास्तविक रुचि का संकेत देता है। अगर वाशिंगटन में कट्टरपंथियों का ऊपरी हाथ होता, तो रोम में दूसरा दौर बिल्कुल भी नहीं होता।

सोमवार, 21 अप्रैल को, ट्रम्प ने सावधानीपूर्वक संवाददाताओं से कहा कि वार्ता 'बहुत अच्छी तरह से' चल रही है, लेकिन चेतावनी

दी कि वास्तविक प्रगति में समय लगेगा। उनके शब्दों के चयन ने लचीला रहने की इच्छा को दर्शाया, जबकि तेहरान के साथ बातचीत की जटिलता - और जोखिमों - को स्वीकार किया।

ईरानी पक्ष में आशावाद अधिक स्पष्ट लगता है। विदेश मंत्री अब्बास अराघची ने कहा कि दोनों पक्षों को मस्कट की तुलना में रोम में काफी अधिक समान जमीन मिली है। उनकी टिप्पणियों से पता चलता है कि गति बढ़ रही है और वास्तविक प्रगति क्षितिज पर हो सकती है।

अराघची की यात्रा कार्यक्रम ने भी भौंहें चढ़ा दीं। रोम जाने से पहले, उन्होंने मास्को में एक पड़ाव डाला, जहां उन्होंने राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन और विदेश मंत्री सर्गेई लावरोव से मुलाकात की। उन्होंने कथित तौर पर सर्वोच्च नेता अयातुल्ला अली खमेनी का एक व्यक्तिगत संदेश - जिसे उन्होंने 'दुनिया को एक संदेश' कहा - दिया। पश्चिम ने प्रतीकात्मकता को नहीं छोड़ाः इस यात्रा को व्यापक रूप से मॉस्को-तेहरान गठबंधन की सार्वजनिक पुनः पुष्टि के रूप में व्याख्यायित किया गया। अमेरिकी सेना के सेवानिवृत्त कर्नल और पेंटागन के पूर्व सलाहकार डगलस मैकग्रेगर ने एक्स पर उल्लेख किया कि ईरान के खिलाफ किसी भी बड़ी अमेरिकी सैन्य कार्रवाई से रूस, तेहरान के रणनीतिक साझेदार से प्रतिक्रिया आने की संभावना है।

उसी दिन, राष्ट्रपति पुतिन ने ईरान के साथ एक व्यापक रणनीतिक साझेदारी की पुष्टि करने वाले एक कानून पर हस्ताक्षर किए - आगे राजनीतिक और आर्थिक सहयोग को मजबूत किया। नाजुक अमेरिका-ईरान वार्ता की पृष्ठभूमि में, मॉस्को-तेहरान धुरी

अचानक अधिक परिणामी दिखती है। इन बढ़ते संबंधों के साथ, वाशिंगटन को ईरान पर एकतरफा दबाव डालना मुश्किल हो सकता है।

इस बीच, तेहरान में हर कोई बातचीत पर बिकाऊ नहीं है। कई ईरानी अधिकारी ट्रम्प के प्रति संशयवादी बने हुए हैं, जिनका 2018 में जेसीपीओए को एकतरफा रूप से खत्म करने का निर्णय अभी भी बड़ा है। उनका अविश्वास ट्रम्प से आगे बढ़कर एक व्यापक चिंता तक फैला हुआ है: कि भविष्य के अमेरिकी राष्ट्रपति एक बार फिर पाठ्यक्रम उलट सकते हैं। अगर ओबामा के सौदों को ट्रम्प ने खत्म कर दिया था, तो ट्रम्प के समझौतों की वही नियति क्यों नहीं होगी?

इन तनावों के बावजूद, प्रमुख अंतरराष्ट्रीय आउटलेट्स ने पुष्टि की है कि वार्ता के दो और दौर की योजना है: एक अगले सप्ताह जिनेवा में और दूसरा उसके बाद ओमान में। निरंतर कूटनीतिक गतिविधि बातचीत को जीवित रखने में एक साझा रुचि की ओर इशारा करती है। अभी के लिए, ट्रम्प के मापे हुए आशावाद और ईरान के सतर्क स्वर दोनों से पता चलता है कि, कम से कम निकट अवधि में, युद्ध का खतरा कम हो गया है।

वाक्पटुता में यह कमी एक गहरे सच को दर्शाती है: स्थायी अविश्वास और घरेलू राजनीतिक दबावों के बावजूद, दोनों पक्षों को टेबल पर रहने में मूल्य दिखता है। इसे देखने के लिए आपको नीति विशेषज्ञ होने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन इजराइल में, माहौल कहीं अधिक चिंतित है। प्रधान मंत्री बेंजामिन नेतन्याहू - ईरान के साथ जुड़ने के बारे में अपनी संशयवाद को कभी भी छिपाने वाले नहीं - ने वार्ता की निंदा की है। तेल अवीव के लिए, बातचीत तेहरान के अलगाव को कम करने और इजराइल की रणनीतिक स्थिति को खतरे में डालने का जोखिम उठाती है।

फिर भी, ट्रम्प की प्राथमिकता क्षेत्रीय राजनीति नहीं है - यह उनकी विरासत है। वह उस राष्ट्रपति के रूप में देखे जाना चाहते हैं जिसने युद्ध से बचा और एक ऐसा सौदा किया जिसे अमेरिकी जनता का समर्थन मिल सके। उस लिहाज से, नेतन्याहू की आपत्तियों को इंतजार करना पड़ सकता है।

फारहाद इब्रागिमोव, आरयूडीएन विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र संकाय में व्याख्याता है और रूसी राष्ट्रपति अकादमी के राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था और लोक प्रशासन के सामाजिक विज्ञान संस्थान में अतिथि व्याख्याता है।

भारत-अमेरिका समान साझेदारी की ओर

हर्ष वी. पंत | विवेक मिश्रा

अमेरिकी उपराष्ट्रपति जेडी वेंस ने हाल ही में भारत का दौरा किया। 22 से 25 अप्रैल तक चली उनकी इस यात्रा में कई महत्वपूर्ण बातें सामने आईं, जो अमेरिका में नई सरकार बनने के बाद भारत और अमेरिका के रिश्तों के लिए जरूरी थीं।

वेंस पहले भी पारिवारिक कारणों से भारत आ चुके हैं, लेकिन उपराष्ट्रपति के तौर पर यह उनका पहला दौरा था। वे डोनाल्ड ट्रम्प के दूसरे कार्यकाल के प्रशासन का भरोसा लेकर आए थे। ट्रम्प का यह कार्यकाल दुनिया के प्रति पहले कार्यकाल से काफी अलग दृष्टिकोण रखता है। वेंस ने भारत आने से पहले सिर्फ यूरोप और ग्रीनलैंड की यात्रा की थी। इससे पता चलता है कि अमेरिका भारत को कितना महत्व

देता है।

वेंस की यात्रा की सबसे खास बात यह थी कि ट्रम्प प्रशासन भारत के साथ मजबूत रिश्ते चाहता है। वे भारतीय समुदाय से सांस्कृतिक जुड़ाव भी चाहते हैं। साथ ही, दोनों देश ऊर्जा, तकनीक, निवेश और लोकतंत्र के मूल्यों पर आधारित भविष्य की ओर मिलकर काम करना चाहते हैं।

जयपुर में वेंस के भाषण से अमेरिका की नीतियों के बारे में स्पष्ट जानकारी मिली। उन्होंने बताया कि उनकी नीतियां पिछली सरकारों से किस तरह अलग होंगी। वेंस ने साफ कहा कि अमेरिका अब भारत को 'उपदेश' नहीं देगा, जैसा कि पहले होता था। ट्रम्प प्रशासन व्यापार में बराबरी चाहता है और इसके लिए वह भारत के साथ सम्मानजनक तरीके से बात करने को तैयार है। दुनिया भी ट्रम्प के लगाए गए टैरिफ के साथ तालमेल बिठाने की कोशिश कर रही है और अपने मतभेदों को भुला रही है।

वेंस ने बताया कि अमेरिका अब दुनिया के साथ व्यापार के मामले में अलग रवैया क्यों अपना रहा है। उन्होंने अपने गृहनगर मिडलटाउन का उदाहरण दिया, जो अमेरिका में मैन्युफैक्चरिंग में गिरावट का प्रतीक बन गया है। वे चाहते हैं कि अमेरिका के उद्योगों को सरकार का समर्थन मिले और देश के लिए बेहतर व्यापार समझौते हों। वेंस ने कहा कि अमेरिका के व्यापार संबंध 'निष्पक्षता' पर आधारित होने चाहिए। ये बातें भारत की जरूरतों से भी मेल खाती हैं।

वेंस ने कहा कि भारत और अमेरिका के बीच सिद्धांतों का भी तालमेल है। दोनों देश श्रमिकों के अधिकारों, निष्पक्ष व्यापार और संतुलित व्यापार प्रणाली का समर्थन करते हैं। वे उन देशों के खिलाफ हैं जो अपने फायदे के लिए व्यापार प्रणाली में हेरफेर करते हैं।

भारत और अमेरिका के दो मुख्य लक्ष्य हैं- आर्थिक विकास और राष्ट्रीय सुरक्षा। व्यापार अब दोनों देशों के संबंधों को मजबूत करने में

सबसे अहम भूमिका निभा रहा है। भारत और अमेरिका के बीच अच्छे व्यापारिक संबंध यह भी दर्शाते हैं कि वाशिंगटन में मौजूदा सरकार पिछली सरकार से अलग तरीके से काम करेगी।

दोनों देशों ने इस दशक के अंत तक 500 अरब डॉलर के व्यापार का लक्ष्य रखा है। यह एक बड़ा लक्ष्य है और इसके लिए व्यापार को तेजी से बढ़ाना होगा। 2024 में भारत ने अमेरिका के साथ 45 अरब डॉलर से ज्यादा का व्यापार अधिशेष (ज्यादा निर्यात) किया था। इस घाटे को कम करने के लिए भारत को सावधानी बरतनी होगी, खासकर जब वह अमेरिका के साथ व्यापार समझौते की बातचीत कर रहा है। भारत के लिए कृषि, डेयरी उत्पाद, ऑटोमोबाइल पार्ट्स और दवा जैसे क्षेत्र महत्वपूर्ण होंगे।

भारत बातचीत में अपने महत्वपूर्ण उद्योगों की रक्षा करेगा, लेकिन उसने अमेरिका के साथ समझौता करने की इच्छा भी दिखाई है। भारत और अमेरिका एक-दूसरे के सामानों पर जो टैक्स लगाते हैं, उनमें अंतर है। भारत 39% टैक्स लगाता है, जबकि अमेरिका सिर्फ 5%। इस अंतर को कम करना एक बड़ी चुनौती होगी।

व्यापार के अलावा, वेंस ने चार और क्षेत्रों को महत्वपूर्ण बताया- राष्ट्रीय सुरक्षा, संयुक्त रक्षा उत्पादन, तकनीक और इनोवेशन में सहयोग, और ऊर्जा के क्षेत्र में संबंध। भारत और अमेरिका के बीच राष्ट्रीय सुरक्षा को लेकर सहयोग कोई नई बात नहीं है। लेकिन बदलते समय के साथ, दोनों देशों के सामने नई चुनौतियां आ रही हैं और हर अमेरिकी राष्ट्रपति इस रिश्ते पर अपनी छाप छोड़ता है।

सुरक्षा के क्षेत्र में एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि भारत और अमेरिका मिलकर रक्षा उपकरण बनाएं। इस साल फरवरी में कॉम्पैक्ट नाम से एक पहल शुरू की गई है। इसके तहत जेवेलिन मिसाइल और स्ट्राइकर इन्फैंट्री वाहन जैसे आधुनिक हथियार भारत में बनाए जाएंगे। इससे युद्ध के मैदान में स्थिति तेजी से बदल सकती है। लंबे समय में, इस तरह के सहयोग से भारत को रक्षा उत्पादन के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनने में मदद मिलेगी। अमेरिका भारत को एफ-35 लड़ाकू विमान बेचना चाहता है, लेकिन यह फैसला भारतीय सेना की जरूरत पर निर्भर करेगा।

इस साल फरवरी में दोनों देशों ने एक संयुक्त बयान जारी किया था। वेंस की यात्रा ने भारत-अमेरिका संबंधों को और

भी मजबूत किया है। दोनों देश इंडो-पैसिफिक क्षेत्र में शांति और सुरक्षा चाहते हैं। इसके लिए वे क्वाड समूह को भी मजबूत करने पर सहमत हुए हैं।

वेंस की यात्रा से यह संकेत मिलता है कि ट्रम्प प्रशासन अब उन समझौतों को खत्म करना चाहता है जिनमें अमेरिका को कम फायदा होता था। इसका मतलब है कि अमेरिका अपने दोस्तों, सहयोगियों और साझेदारों के साथ व्यापार और निवेश के मामले में सख्त रवैया अपनाएगा, लेकिन समानता के आधार पर उन्हें रणनीतिक मदद भी देगा। अमेरिका चाहता है कि दूसरे देश भी जिम्मेदारी लें और बोझ साझा करें। भारत, ट्रम्प प्रशासन के साथ एक अच्छा सौदा कर सकता है। इसके लिए उसे यह दिखाना होगा कि वह दोनों देशों के बीच संबंधों को बेहतर बनाने में कितना योगदान दे रहा है। भारत, अमेरिका से ऊर्जा खरीदकर व्यापार में संतुलन ला सकता है।

अंत में, वेंस की यात्रा के दौरान ही पाकिस्तान ने कश्मीर के पहलगाम में आतंकवादी हमला किया। ऐसा पहले भी कई बार हुआ है, जब अमेरिका के बड़े नेता भारत दौरे पर आए और पाकिस्तान ने हमले करवाए। भारत को तुरंत पाकिस्तान के खिलाफ कार्रवाई करनी चाहिए और उसे अपनी ताकत का एहसास दिलाना चाहिए। साथ ही, भारत को अमेरिका और अंतरराष्ट्रीय समुदाय के साथ मिलकर आतंकवाद का मुकाबला करने के लिए सहयोग बढ़ाना चाहिए। अमेरिका ने हाल ही में तहव्वुर राणा को भारत को सौंपा है, जिससे पता चलता है कि वह आतंकवाद के खिलाफ सख्त है। अब अमेरिका को आतंकवाद के खिलाफ भारत के प्रयासों का खुलकर समर्थन करना चाहिए।

प्रोफेसर हर्ष वी. पंत, ऑब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन, नई दिल्ली में - अध्ययन और विदेश नीति के उपाध्यक्ष हैं। वे किंग्स कॉलेज लंदन में किंग्स इंडिया इंस्टीट्यूट में अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के प्रोफेसर हैं। वे दिल्ली विश्वविद्यालय में दिल्ली स्कूल ऑफ ट्रांसनेशनल अफेयर्स के निदेशक (मानद) भी हैं। विवेक मिश्रा ऑब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन में सामरिक अध्ययन कार्यक्रम के उप निदेशक हैं। उनका कार्य अमेरिकी विदेश नीति, अमेरिका में घरेलू राजनीति, हिंद महासागर और इंडो-पैसिफिक में अमेरिका की भूमिका, विशेष रूप से दक्षिण एशियाई सुरक्षा को आकार देने में इसकी भूमिका पर केंद्रित है। उनकी अन्य रुचियों में भारत-अमेरिका रक्षा संबंध और महान शक्ति प्रतिस्पर्धा शामिल हैं।

वक्फ संशोधन विधेयक, 2025

मजहब, राजनीति और संविधान के त्रिकोण पर खड़ा जटिल सवाल

संतु दास

संसद के गलियारों से उठती बहस अब सड़कों तक गूंज रही है। 2025 का वक्फ संशोधन विधेयक न केवल एक कानूनी दस्तावेज है, बल्कि यह भारतीय लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता और अल्पसंख्यक अधिकारों की त्रैतीय परीक्षा का मैदान बन चुका है। 'उम्मीद' नामक यह विधेयक अब 'उलझन' का प्रतीक बन गया है ...

संसद के गलियारों से लेकर देश की सड़कों तक—वक्फ संशोधन विधेयक, 2025 आज भारत की राजनीति, समाज और संविधान के सबसे बड़े विमर्श का केंद्र बन गया है। यह केवल एक विधायी प्रस्ताव नहीं, बल्कि एक ऐसा बिंदु है जिसने भारतीय लोकतंत्र के धर्मनिरपेक्ष ढांचे, अल्पसंख्यक अधिकारों और राजनीतिक नैतिकता को कठघरे में खड़ा कर दिया है।

लोकसभा में 288 बनाम 232 और राज्यसभा में 128 बनाम 97 मतों से विधेयक का पारित होना अपने आप में दर्शाता है कि यह सामान्य बहुमत नहीं था। सरकार को अपने सहयोगियों को साधने के लिए राजनीतिक चालों का सहारा लेना पड़ा।

बीजू जनता दल ने लोकसभा में विधेयक का विरोध किया, पर राज्यसभा में रुख बदल लिया। अन्नाद्रमुक ने विरोध दर्ज किया, तो भाजपा ने प्रदेश स्तर पर संगठनात्मक फेरबदल तक की तैयारी दिखाई। एनडीए के सहयोगी जयंत चौधरी, चिराग पासवान और चंद्रबाबू नायडु ने पहले मुस्लिम हितों की बात की, पर अंततः विधेयक के समर्थन में खड़े हुए।

क्या यह समरसता की नीति थी, या सत्ता के समीकरणों की मजबूरी?

अल्पसंख्यक मामलों के मंत्री किरण रिजीजू ने इसे 'उम्मीद'एक्ट (यूनिफाइड वक्फ मैनेजमेंट, इम्पावरमेंट, एफिशिएंसी एंड डेवलपमेंट एक्ट) नाम दिया। उनका दावा है कि यह कानून वक्फ संपत्तियों के पारदर्शी प्रबंधन से मुसलमानों, खासकर पासमांदा वर्ग और महिलाओं को सशक्त बनाएगा।

वक्फ संशोधन विधेयक 2025 के पारित होने के बाद, पश्चिम बंगाल के मुर्शिदाबाद जिले में 8 से 13 अप्रैल के बीच हिंसक दंगे भड़क उठे। प्रदर्शनकारियों ने राष्ट्रीय राजमार्ग 12 को अवरुद्ध करक दिया, पुलिस के वाहनों को आग के हवाले किया और एक स्थानीय सांसद के कार्यालय पर हमला किया। इस हिंसा में तीन लोगों की मृत्यु हुई और दस से अधिक घायल हुए। लगभग 274 लोगों को गिरफ्तार किया गया, और 400 से अधिक लोग विस्थापित होकर मालदा जिले में शरण लेने को मजबूर हुए। विपक्ष इसे हवा भी देता रहा साथ ही इस विधेयक को 'धोखे का नाम' मानता है। समाजवादी पार्टी के अखिलेश यादव ने इसे वक्फ संपत्तियों पर 'राजकीय कब्जे' की साजिश बताया। कांग्रेस, टीएमसी और लेफ्ट दलों ने मिलकर इसे अनुच्छेद 25, 26 और 14 के उल्लंघन के रूप में अदालत में चुनौती दी है।

नए कानून के प्रमुख प्रावधान:

- वक्फ बोर्डों में गैर-मुस्लिम सदस्य होंगे।
- हर बोर्ड में कम से कम दो मुस्लिम महिलाएं अनिवार्य रूप से शामिल होंगी।
- जिला कलेक्टर या उससे ऊपर के अधिकारी वक्फ संपत्ति की मान्यता तय करेंगे।
- लिमिटेशन एक्ट से छूट खत्म कर दी गई है।
- वक्फ संस्थाओं को मिलने वाला वार्षिक योगदान 7% से घटाकर 5% कर दिया गया है।
- ' 1 लाख से अधिक आमदनी वाली संस्थाएं अब राज्य सरकार के लेखा परीक्षक से ऑडिट कराएंगी।
- 6 महीने के भीतर सभी वक्फ संपत्तियों को केंद्रीय पोर्टल पर पंजीकृत करना अनिवार्य होगा।

सरकार इसे पारदर्शिता का उपाय मानती है, पर मुस्लिम संगठनों को यह धार्मिक स्वतंत्रता में हस्तक्षेप प्रतीत होता है।

विधेयक के समर्थन के बाद एनडीए के सहयोगी दलों में भी असंतोष फैलने लगा है। बिहार में जदयू और लोजपा के कुछ विधायकों ने इस्तीफा दिया। पश्चिम यूपी में रालोद को अपने मुस्लिम वोट बैंक से आलोचना झेलनी पड़ रही है। आंध्र प्रदेश में टीडीपी के मुस्लिम कार्यकर्ताओं में नाराजगी दिख रही है।

प्रश्न उठता है—क्या भाजपा सहयोगी दलों की राजनीतिक जमीन कमजोर कर अपना आधार बढ़ाना चाहती है? या यह दीर्घकालिक रणनीति का हिस्सा है?

संघ के मुखपत्र ऑर्गेनाइज़र ने वक्फ से भी ज्यादा जमीन चर्च और ईसाई मिशनरियों के पास होने का दावा किया। कांग्रेस नेता राहुल गांधी ने इस पर तीखी प्रतिक्रिया देते हुए सरकार पर सिख, ईसाई और आदिवासी समुदायों को भी निशाने पर लेने का आरोप लगाया।

यह बयानबाजी वक्फ विधेयक को महज मुस्लिम मुद्दा नहीं रहने देती—यह उसे भारत की बहु-धार्मिक संरचना पर केंद्रित बहस में बदल देती है।

वरिष्ठ अधिवक्ता अभिषेक मनु सिंघवी की याचिका में यह विधेयक संविधान के अनुच्छेद 14 (समानता), 25 और 26 (धार्मिक स्वतंत्रता) और मूल ढांचे के उल्लंघन के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

अब यह मामला सुप्रीम कोर्ट में है। लेकिन प्रश्न है—क्या न्यायपालिका राजनीतिक दबावों से मुक्त रह पाएगी?

देशभर में विरोध प्रदर्शन तेज हो रहे हैं। मुस्लिम संगठनों ने इसे नया सीएए बताया है। दिल्ली, लखनऊ, भोपाल, हैदराबाद और कोलकाता में रैलियां हो रही हैं। भाजपा शासित राज्यों में पुलिस सख्ती और नजरबंदी की खबरें सामने आ रही हैं। यह सब लोकतंत्र के स्वास्थ्य पर प्रश्नचिन्ह लगाता है।

मुर्शिदाबाद सांप्रदायिक हिंसा सामाजिक सौहार्द पर संकट

वक्फ संशोधन विधेयक, 2025 के पारित होते ही पश्चिम बंगाल के मुर्शिदाबाद में भड़की हिंसा ने न सिर्फ जान-माल का नुकसान पहुंचाया, बल्कि सामाजिक सौहार्द पर भी सवाल खड़े कर दिए। यह विवाद अब न्यायपालिका और कार्यपालिका के टकराव तक पहुंच गया है।

वक्फ संशोधन विधेयक, 2025 के पारित होने के बाद पश्चिम बंगाल के मुर्शिदाबाद जिले में भड़की हिंसा ने देश के सामाजिक ताने-बाने को झकझोर कर रख दिया है। 8 से 13 अप्रैल के बीच हुई इस हिंसा में तीन लोगों की मौत हुई, दस से अधिक घायल हुए और 274 से अधिक गिरफ्तारियां हुईं। सैकड़ों लोग विस्थापित होकर मालदा जिले में शरण लेने को मजबूर हुए।

वक्फ संशोधन विधेयक के तहत वक्फ बोर्डों में गैर-मुस्लिम सदस्यों की नियुक्ति, वक्फ संपत्तियों के निर्धारण का अधिकार सरकारी अधिकारियों को देना, और वक्फ बोर्ड को लिमिटेशन एक्ट से मिली छूट को समाप्त करना जैसे प्रावधान शामिल हैं। इन प्रावधानों को लेकर मुस्लिम समुदाय में असंतोष व्याप्त है, जिसे विधेयक के खिलाफ विरोध प्रदर्शनों में देखा गया।

5 अप्रैल को राष्ट्रपति की मंजूरी के बाद मुर्शिदाबाद में विरोध प्रदर्शन शुरू हुए। 12 अप्रैल को दिघोरी, जाफराबाद, रानीपाल और बेदबोना मोहल्लों में हथियारों से लैस भीड़ ने हिंदू घरों और दुकानों में लूटपाट और आगजनी की। जाफराबाद में हरगोबिंद दास (71) और उनके पुत्र चंदन दास (41) की पीट-पीटकर हत्या कर दी गई। 13 अप्रैल को एजाज अहमद की मौत की खबर फैलने के बाद अशांति और बढ़ गई।

मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने आरोप लगाया कि हिंसा में बाहरी तत्व शामिल थे, जिन्हें 6000-7000 रुपये में भाड़े पर लाया गया था। वहीं, भाजपा नेताओं ने मुस्लिम कट्टरपंथियों और बांग्लादेशी तत्वों की संलिप्तता का आरोप लगाया। हालांकि, एक रिपोर्ट में बांग्लादेशी नागरिकों की संलिप्तता के कोई प्रमाण नहीं मिले हैं।

21 अप्रैल को सुप्रीम कोर्ट में वकील विष्णु शंकर जैन ने राज्य में केंद्रीय पुलिस बल भेजने और राष्ट्रपति शासन लगाने की याचिका दायर की। इस पर न्यायाधीश बीआर गवई और ए.जी. मसीह की खंडपीठ की टिप्पणी से न्यायपालिका और कार्यपालिका के बीच तनाव और बढ़ गया।

मुर्शिदाबाद की हिंसा ने स्पष्ट कर दिया है कि वक्फ संशोधन विधेयक केवल कानूनी परिवर्तन नहीं, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक स्थिरता के लिए एक गंभीर चुनौती है। सरकार को चाहिए कि वह सभी हितधारकों के साथ संवाद स्थापित करे और अल्पसंख्यकों की चिंताओं को गंभीरता से ले। साथ ही, न्यायपालिका की स्वतंत्रता और संविधान के मूल्यों का सम्मान करते हुए, समाज में विश्वास बहाली के प्रयास किए जाएं।

वक्फ संशोधन विधेयक 2025

संविधान की चौखट पर सियासत की दस्तक

संसद के गलियारों से लेकर देश की सड़कों तक - वक्फ संशोधन विधेयक, 2025 आज भारत की राजनीति, समाज और संविधान के सबसे बड़े विमर्श का केंद्र बन गया है।

संसद में ध्रुवीकरण
सड़क पर उबाल

लोकसभा: 288 बनाम 232

राज्यसभा: 128 बनाम 97

यूनिफाइड वक्फ मैनेजमेंट, इम्पावरमेंट, एफिशिएंसी एंड डेवलपमेंट एक्ट

सरकार की 'उम्मीद'
विपक्ष की उपेक्षा

- **वक्फ बोर्ड की नई संरचना**
- **बदलाव या हस्तक्षेप?**

नए कानून के प्रमुख प्रावधान

- वक्फ बोर्डों में गैर-मुस्लिम सदस्य होंगे।
- हर बोर्ड में कम से कम दो मुस्लिम महिलाएं अनिवार्य रूप से शामिल होंगी।
- जिला कलेक्टर या उससे ऊपर के अधिकारी वक्फ संपत्ति की मान्यता तय करेंगे।
- लिमिटेशन एक्ट से छूट खत्म कर दी गई है।
- वक्फ संस्थाओं को मिलने वाला वार्षिक योगदान 7% से घटाकर 5% कर दिया गया है।

- ‘ 1 लाख से अधिक आमदनी वाली संस्थाएं अब राज्य सरकार के लेखा परीक्षक से ऑडिट कराएंगी।

यूरोपीय संघ एवं मध्य एशिया: भविष्य की राह

अय्याज वानी

रूस-यूक्रेन युद्ध के बाद बदले वैश्विक समीकरणों के बीच यूरोपीय संघ ने मध्य एशिया से संबंध मजबूत करने की रणनीति अपनाई है। समरकंद में आयोजित ईयू-मध्य एशिया शिखर सम्मेलन से व्यापार, ऊर्जा और खनिजों में सहयोग को बल मिला है, जिससे क्षेत्रीय भू-राजनीतिक संतुलन नया मोड़ ले रहा है।

रूस-यूक्रेन युद्ध के बाद से भू-राजनीतिक हालात तेजी से बदल रहे हैं। ऐसे में यूरोपीय संघ ने मध्य एशिया के पांच देशों के साथ अपने रिश्ते मजबूत किए हैं। ये देश प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर हैं। ईयू ने इन देशों के साथ व्यापार, कनेक्टिविटी और ऊर्जा के क्षेत्र में सहयोग बढ़ाया है।

इस साझेदारी को और गति देने के लिए 3 और 4 अप्रैल 2025 को समरकंद में पहला ईयू-मध्य एशिया शिखर सम्मेलन आयोजित किया गया। यूरोपीय आयोग की अध्यक्ष उर्सुला वॉन डेर लेयेन, यूरोपीय परिषद के अध्यक्ष एंटोनियो कोस्टा और मध्य एशिया के पांच देशों (कजाकिस्तान, किर्गिस्तान, ताजिकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान और उज्बेकिस्तान) के नेताओं ने आपसी भू-राजनीतिक, भू-आर्थिक और व्यापारिक संबंधों पर चर्चा की।

2024 में ट्रांस-कैस्पियन ट्रांसपोर्ट कॉरिडोर (टीआईटीआर) में 10.6 अरब डॉलर के निवेश के अलावा, ईयू ने शिखर सम्मेलन के दौरान मध्य एशिया में 13.2 अरब डॉलर के निवेश की घोषणा की। मध्य एशिया के साथ मजबूत कनेक्टिविटी से ईयू को सीधे क्षेत्रीय व्यापार करने का मौका मिलेगा। इससे ईयू की ऊर्जा और

कच्चे माल की बढ़ती मांग को पूरा करने में मदद मिलेगी। वहीं, ईयू के साथ मजबूत संबंधों से मध्य एशियाई देशों को अपनी विदेश नीति में विविधता लाने का अवसर मिलेगा। दशकों से इन देशों की विदेश नीति पर रूस और चीन का दबदबा रहा है।

आजकल दुनिया में तेजी से बदलाव हो रहे हैं। ऐसे में मध्य एशिया के साथ संबंध बढ़ाना ईयू का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य बन गया है। मध्य एशिया भू-रणनीतिक और भू-आर्थिक रूप से बहुत महत्वपूर्ण है। बढ़ते भू-राजनीतिक तनावों ने ईयू को अपनी विदेश नीति पर फिर से विचार करने और ऊर्जा और महत्वपूर्ण खनिजों के लिए नई और टिकाऊ आपूर्ति श्रृंखलाएं स्थापित करने के लिए मजबूर कर दिया है। ईयू-मध्य एशिया शिखर सम्मेलन ऐसे समय में हुआ जब अन्य बड़े खिलाड़ी अपनी रणनीतिक मुद्दों पर ध्यान केंद्रित कर रहे थे। उदाहरण के लिए, रूस यूक्रेन में युद्ध कर रहा है, चीन के व्यापारिक विवाद चल रहे हैं और अमेरिका में ट्रम्प प्रशासन संरक्षणवादी नीतियां अपना रहा है।

क्षेत्र के रणनीतिक महत्व की सराहना करते हुए, वॉन डेर लेयेन ने सहयोग के चार मुख्य क्षेत्रों पर जोर दियाः कनेक्टिविटी, कच्चा माल, स्वच्छ ऊर्जा और डिजिटल कनेक्टिविटी। रूस-यूक्रेन युद्ध

के बाद, कनेक्टिविटी दोनों क्षेत्रों के लिए सबसे बड़ी प्राथमिकता बन गई है। ईयू की ग्लोबल गेटवे रणनीति के तहत टीआईटीआर पहल शुरू की गई है। टीआईटीआर भू-आबद्ध मध्य एशिया को दक्षिण काकेशस के माध्यम से यूरोप से जोड़ता है। 2024 में इस मार्ग से 45 लाख टन कंटेनरों का परिवहन हुआ था, और 2027 तक 1 करोड़ टन का लक्ष्य रखा गया है। हालांकि, आधुनिकीकरण और बुनियादी ढांचे की चुनौतियों के कारण, मध्य एशिया से ईयू तक केवल 1 लाख कंटेनर ही भेजे जा रहे हैं। शिखर सम्मेलन में, ईयू ने कनेक्टिविटी बढ़ाने और टीआईटीआर को आधुनिक बनाने के लिए 3.4 अरब डॉलर आवंटित किए हैं। इससे ईयू को हर साल लगभग 8 लाख कंटेनर प्राप्त करने में मदद मिल सकती है।

ईयू मध्य एशिया का दूसरा सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है, जो इस क्षेत्र के विदेशी व्यापार का 22.6 प्रतिशत है। यह इस क्षेत्र में सबसे बड़ा निवेशक भी है, जो कुल निवेश का 40 प्रतिशत से अधिक है। ईयू मुख्य रूप से कच्चे तेल, गैस और धातुओं का आयात करता है और उसने तुर्कमेनिस्तान को छोड़कर सभी मध्य एशियाई देशों के साथ उन्नत भागीदारी और सहयोग समझौते (ईपीसीए) पर बातचीत की है। इसके अलावा, मध्य एशिया में यूरेनियम जैसे आवश्यक खनिजों का विशाल भंडार है, साथ ही लिथियम, ग्रेफाइट और मैंगनीज जैसे दुनिया के 40 प्रतिशत महत्वपूर्ण संसाधन भी हैं। अकेले कजाकिस्तान ईयू अर्थव्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण 34 खनिजों में से 19 का उत्पादन करता है। वहीं, उज्बेकिस्तान, ताजिकिस्तान और किर्गिस्तान में क्रमशः 71, 17 और 43 महत्वपूर्ण खनिजों का भंडार है।

2023 तक, ईयू अपनी दुर्लभ पृथ्वी तत्वों की 94 प्रतिशत जरूरतों के लिए चीन, मलेशिया और रूस से आयात पर निर्भर है। इससे आपूर्ति श्रृंखला में व्यवधानों को लेकर चिंताएं बढ़ गई हैं। ईयू चीन और रूस जैसे देशों पर अपनी निर्भरता कम करने के लिए काम कर रहा है, और शिखर सम्मेलन में, उसने मध्य एशिया में आवश्यक कच्चे माल के लिए 3.69 अरब डॉलर आवंटित किए। क्षेत्र के महत्वपूर्ण खनिजों और वैश्विक प्रतिस्पर्धियों के महत्व को संबोधित करते हुए, वॉन डेर लेयेन ने बिना चीन का उल्लेख किए कहा कि अन्य शक्तियां 'केवल शोषण और निकालने में रुचि रखती हैं।' उन्होंने आश्वासन दिया कि ईयू स्थानीय उद्योगों और मूल्यों को संरक्षित करके एक अलग दृष्टिकोण अपनाएगा। ईयू ने मध्य एशिया में नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाओं और हाइड्रोकार्बन को विकसित करने को भी प्राथमिकता दी है क्योंकि यह क्षेत्र जलवायु परिवर्तन के बढ़ते प्रभावों से जूझ रहा है। ईयू इन परियोजनाओं में लगभग 7.2 अरब डॉलर का निवेश करेगा, और नेताओं ने कनेक्टिविटी, विशेष रूप से टीआईटीआर को विकसित करने के लिए इस साल के अंत में एक और निवेशक शिखर सम्मेलन आयोजित करने पर सहमति व्यक्त की।

मध्य एशियाई देशों ने लंबे समय से चले आ रहे क्षेत्रीय संघर्षों

को सुलझाने में प्रगति की है। उज्बेकिस्तान, ताजिकिस्तान और किर्गिस्तान ने हाल ही में खुजंद घोषणा पर हस्ताक्षर करके अपनी सीमा का सीमांकन पूरा किया है। इन सीमा विवादों ने ऐतिहासिक रूप से मध्य एशिया में सहयोग और एकीकरण में बाधा डाली है, जिससे सीमा पर झड़पें हुई हैं। अब, मध्य एशियाई देश क्षेत्रीय व्यापार को बढ़ावा देने और औद्योगिक प्रयासों पर सहयोग करने के लिए नए व्यापार मार्गों का विकास कर रहे हैं। हालांकि, व्यापक यूरेशियाई क्षेत्र में तनाव, विशेष रूप से अजरबैजान और आर्मेनिया को शामिल करते हुए, ईयू और मध्य एशिया के बीच बढ़ते रणनीतिक संबंधों को बाधित कर सकता है। अजरबैजान और आर्मेनिया के बीच संघर्ष ने 2023 में नागोर्नो-काराबाख संघर्ष को बढ़ा दिया, जिससे हजारों जातीय अर्मेनियाई लोगों को आर्मेनिया भागने के लिए मजबूर होना पड़ा। टीआईटीआर और मध्य एशिया से ईयू तक अधिकांश गैस और तेल आपूर्ति दक्षिण काकेशस से होकर गुजरती है। शिखर सम्मेलन के बाद, रूस ने ताजिकिस्तान के साथ संयुक्त आतंकवाद विरोधी सैन्य अभ्यास शुरू किया और अपने सांस्कृतिक कूटनीति प्रयासों को बढ़ाया। साथ ही, टीआईटीआर के बढ़ते महत्व के साथ, बीजिंग दक्षिण काकेशस, विशेष रूप से जॉर्जिया और अजरबैजान में बीआरआई को टीआईटीआर के साथ संरेखित करने की कोशिश कर रहा है। चीन ने गैस, तेल और अन्य महत्वपूर्ण खनिजों में भी भारी निवेश किया है और इस क्षेत्र से अपनी गैस का 30 प्रतिशत आयात करता है। बीजिंग इस क्षेत्र में अपनी शक्ति को मजबूत करने के लिए शंघाई सहयोग संगठन (एससीओ) का भी लाभ उठाता है। चीन ने मध्य एशिया के देशों के साथ कई संयुक्त सैन्य अभ्यास किए हैं और द्विपक्षीय और बहुपक्षीय दोनों तरह से प्रशिक्षण और रक्षा प्रौद्योगिकी की पेशकश की है।

दशकों से, चीन और रूस के बढ़ते प्रभाव ने मध्य एशियाई देशों की आयात और निर्यात क्षमताओं के साथ-साथ विदेश नीति विकल्पों को भी सीमित कर दिया है। फिर भी, मध्य एशियाई देश बदलते वैश्विक परिदृश्य में अपनी स्थिति को बहाल करने के लिए यूरोप और अन्य भागीदारों के साथ जुड़ने के लिए तेजी से इच्छुक दिखाई देते हैं। हालांकि ईयू ने आधिकारिक तौर पर रूस और चीन को चुनौती नहीं दी है, लेकिन वह सक्रिय रूप से विकल्प प्रदान करना चाहता है और दोनों क्षेत्रों के लिए व्यापार, कनेक्टिविटी, महत्वपूर्ण खनिज निष्कर्षण और विभिन्न अन्य क्षेत्रों में रणनीतिक स्वायत्तता बनाना चाहता है। क्षेत्र के साथ मजबूत संबंधों के लिए ईयू की बढ़ती प्रतिबद्धता क्षेत्रीय एकीकरण को बढ़ावा देगी और दोनों क्षेत्रों के बीच आर्थिक संबंधों को बढ़ाएगी। हालांकि, प्रभावशीलता क्षेत्रीय नेताओं की सहयोग करने और मध्य एशिया और दक्षिण काकेशस दोनों में भू-राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता और विवादों पर आर्थिक विकास को प्राथमिकता देने की क्षमता पर निर्भर करती है।

अय्याज वानी (पीएचडी) ऑब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन में सामरिक अध्ययन कार्यक्रम में फेलो हैं।

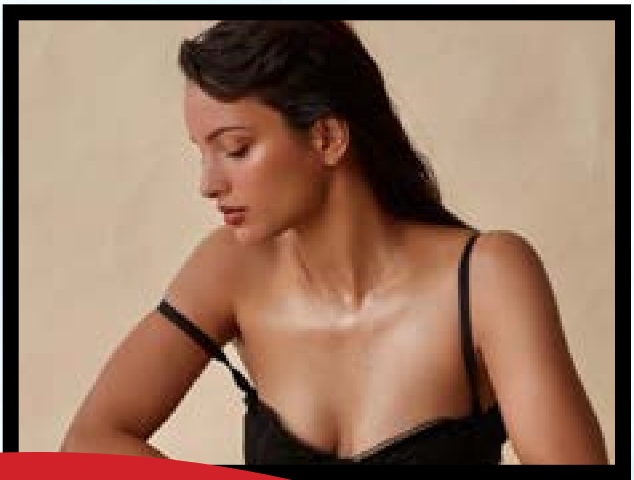

शादी? अभी तो करियर का 'एनिमल' मोड ऑन है!

'एनिमल' गर्ल त्रिप्ती डिमरी इन दिनों बॉलीवुड की नई सनसनी बनी हुई हैं! फिल्म एनिमल में रणबीर कपूर की 'ज़ोया' बनकर उन्होंने दिल तो चुराया ही, करियर को भी सुपरफास्ट ट्रैक पर डाल दिया। बुलबुल, क़ला और लैला मजनूं जैसी फिल्मों से आलोचकों की वाहवाही पाने वाली त्रिप्ती अब पूरे देश में छा चुकी हैं। उनकी मासूमियत भरी मुस्कान और हॉट लुक्स दोनों ही फैंस के दिलों को घायल कर रहे हैं। इसी बीच जब मीडिया ने उनसे शादी को लेकर सवाल किया, तो उन्होंने बड़े ही चटपटे अंदाज़ में कहा – 'अभी तो करियर की दुल्हन बनी हूं, शादी का मंडप थोड़ा दूर है!' त्रिप्ती के इस जवाब ने साफ कर दिया कि फिलहाल वो अपने अभिनय की पिच पर छक्के मारना चाहती हैं। शादी? वो तो इंटरवल के बाद की कहानी है! ●

श्रेया घोषाल

पहलगाम आतंकी हमले के विरोध में रद्द किया कॉन्सर्ट

22 अप्रैल 2025 को पहलगाम आतंकवादी हमले ने पूरे देश को झकझोर कर रख दिया है। इस दर्दनाक हमले में कई निर्दोष पर्यटकों की जान चली गई। घटना के बाद बॉलीवुड और संगीत जगत से जुड़े सितारे शोक और गुस्से से भर उठे। शाहरुख़ ख़ान, सलमान ख़ान, प्रियंका चोपड़ा, आलिया भट्ट, अक्षय कुमार, सोनू सूद और सिद्धार्थ मल्होत्रा जैसे बड़े नामों ने सोशल मीडिया पर कड़ी प्रतिक्रिया देते हुए इस कायराना हरकत की कड़ी निंदा की। अब संगीत जगत के कलाकार भी पीड़ितों के साथ अपनी एकजुटता दिखा रहे हैं। स्वर कोकिला श्रेया घोषाल ने इस हमले के विरोध में अपना सूरत कॉन्सर्ट रद्द कर दिया है। उन्होंने कहा कि 'ऐसे समय में संगीत नहीं, शांति और एकता की ज़रूरत है।' उनके इस कदम को प्रशंसकों और साथी कलाकारों का समर्थन मिल रहा है। सोशल मीडिया पर लोग कह रहे हैं कि यह संवेदनशीलता और ज़िम्मेदारी की मिसाल है। माना जा रहा है कि अन्य संगीतकार भी इसी राह पर चल सकते हैं। ●

ईशा देओल की शादी पर छाया ब्रेकअप का साया!

इश्क का The End ?

धर्मेन्द्र और हेमा मालिनी की लाड़ली ईशा देओल एक बार फिर सुर्खियों में हैं, लेकिन इस बार वजह कोई फिल्म नहीं, बल्कि उनकी शादीशुदा जिंदगी है। 2012 में ईशा ने बिजनेसमैन भरत तख्तानी से इस्कॉन मंदिर में सात फेरे लिए थे। उस भव्य शादी में पापा धर्मेन्द्र की आंखें नम हो गई थीं और ईशा की विदाई हर दिल को छू गई थी। लेकिन अब Reddit पर वायरल एक पोस्ट ने खलबली मचा दी है। दावा किया गया है कि ईशा और भरत के रिश्ते में दरार आ गई है, क्योंकि ईशा ने पति संग तस्वीरें पोस्ट करना बंद कर दिया है और अब सिर्फ मां हेमा मालिनी के साथ नजर आती हैं। हालांकि ईशा ने अब तक इस पर कोई बयान नहीं दिया है, लेकिन फैंस जरूर पूछ रहे हैं – क्या बॉलीवुड की ये परी अब अकेली उड़ान भरने जा रही है? ●

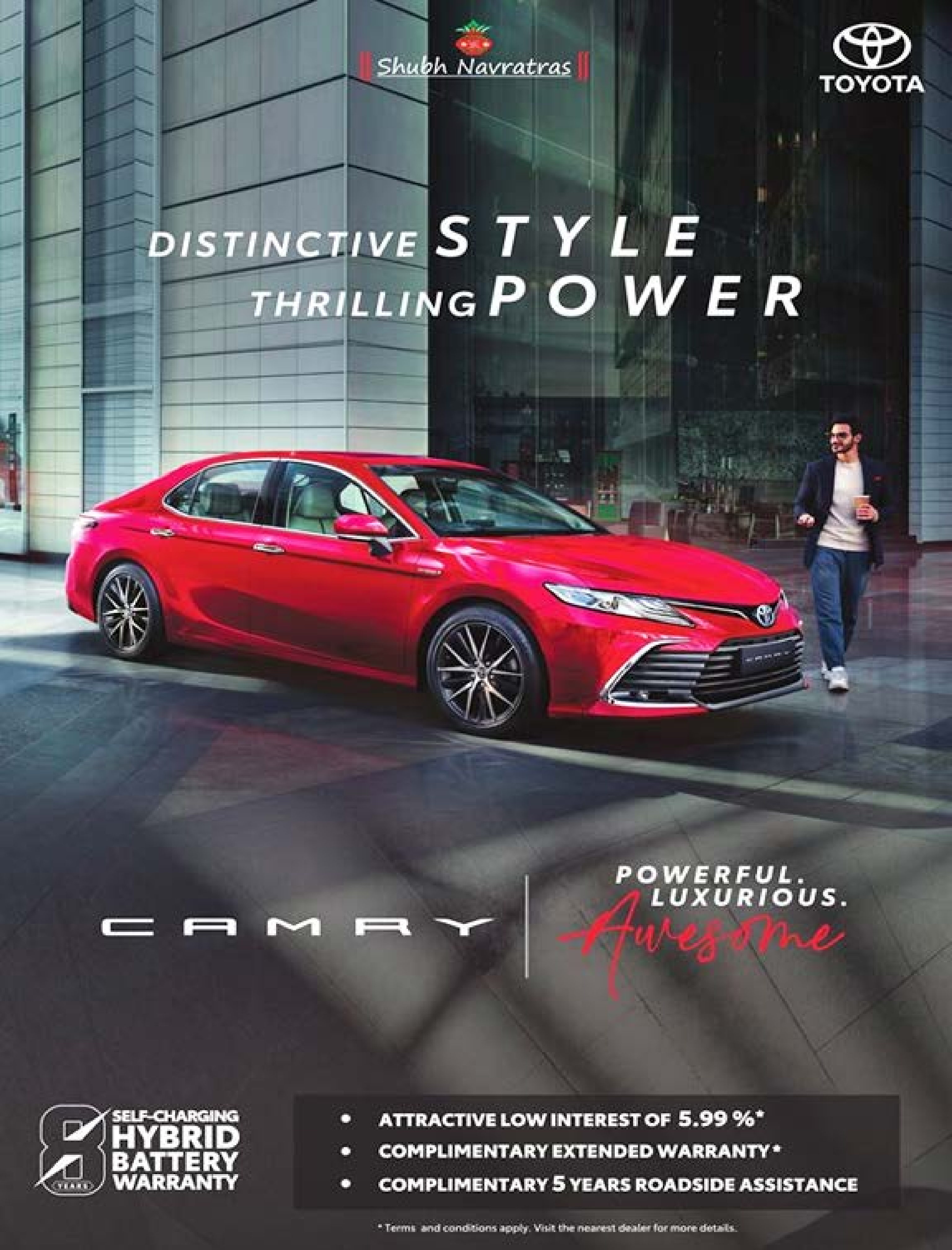
Shubh Navratras
TOYOTA
DISTINCTIVE STYLE
THRILLING POWER
CAMRY
POWERFUL.
LUXURIOUS.
Awesome
SELF-CHARGING
HYBRID
BATTERY
WARRANTY
8
YEARS
ATTRACTIVE LOW INTEREST OF 5.99 %*
COMPLIMENTARY EXTENDED WARRANTY*
COMPLIMENTARY 5 YEARS ROADSIDE ASSISTANCE
* Terms and conditions apply. Visit the nearest dealer for more details.

RNI TITLE CODE : DELENG19447

MARC SANITATION PVT. LTD.

A-2, S.M.A. Co-op. Industrial Estate, G.T. Karnal Road, Delhi-110 033

Ph: 27691410, Fax: 011-27691445/27692295 E-mail: info@marcindia.com Website : www.marcindia.com